ही लिया गया है परन्तु यहाँ विन्यास को देखने के लिए हमारी नजर जिस ओर घूमती है उसी आधार पर किया गया है है। जैसे लेक्टिक अम्ल में बड़ा समूह (-OH) दांयी ओर होने पर D-लेक्टिक अम्ल जबकि बांयी ओर होने पर L- लेक्टिक अम्ल कहा गया।

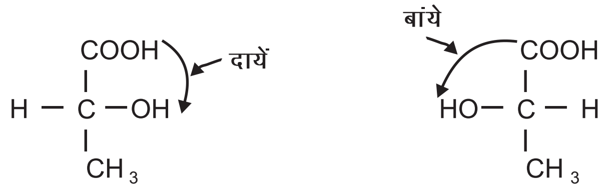

D- लेक्टिक अम्ल L- लेक्टिक अम्ल

रेसिमिक मिश्रण एवं रेसिमीकरण (Recemic Mixture and Recemisation)–

यदि किसी ध्रुवण घूर्णक यौगिक का ऐसा मिश्रण लिया जाये जिसमें कि 50% भाग दक्षिण ध्रुवण घूर्णक हो तथा शेष 50% भाग वामध्रुवण घूर्णक हो तो ऐसा मिश्रण ध्रुवण अघूर्णक बन जाता है। इस प्रकार का मिश्रण 'रेसिमिक मिश्रण' कहलाता है। उदाहरणार्थ यदि लेक्टिक अम्ल में इस प्रकार का मिश्रण लिया जाये तो इसे dl-लेक्टिक अम्ल कहेंगे जो समतल ध्रुवित प्रकाश के उतल को घूर्णित नही करता है। वास्तव में आधा भाग d- लेक्टिक अम्ल ध्रुवित प्रकाश को जितना घूर्णित (+ a) करता है शेष आधा l- लेक्टिक अम्ल पुनः विपरीत दिशा (- a) करता है। इस प्रकार आधा भाग शेष आधे भाग द्वारा समायोजित होकर ध्रुवण अघूर्णक बन जाता है यह ''बाह्य प्रतिकार'' (External Compensation) कहलाता है।

उदाहरणार्थ निम्न अभिक्रियाओं में रेसिमिक मिश्रण प्राप्त होता है।

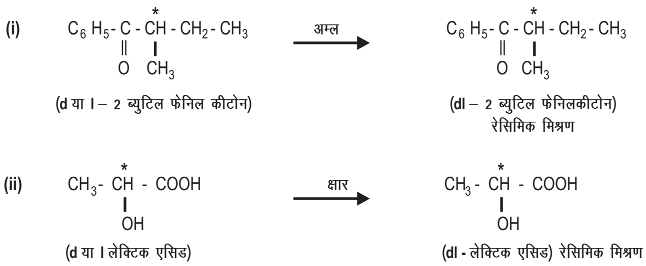

वह प्रक्रिया जिसमें d या l- यौगिक को रेसिमिक मिश्रण अर्थात् dl - में परिवर्तित किया जाता है रेसिमिकरण कहलाती है जैसे उक्त अभिक्रियाये इन यौगिकों की रेसिमिकरण अभिक्रियायें है।

ऐसी अभिक्रिया जो एकाणुक नाभिकस्नेही प्रतिस्थापन ($S_N{}^1$) क्रिया विधि द्वारा सम्पन्न होती है, सदैव रेसिमिक मिश्रण बनाती है। इन अभिक्रियाओं में एक उच्च क्रियाशील मध्यवर्ती कार्बोकेटायन प्राप्त होता है, जिस पर अगले तीव्र वेग वाले पद में कोई नाभिकस्नेही दोनों ओर से प्रहार कर सकता है अतः 50% d एवं 50% l प्रकाशित समावयवियों का मिश्रण प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ 2–क्लोरोप्रोपेनॉइक अम्ल के क्षारीय जल अपघटन से dl - रेसिमिक मिश्रण प्राप्त होता है जिसकी क्रियाविधि निम्न प्रकार है–

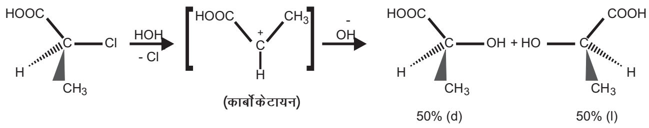

(d – लेक्टिक अम्ल)

रेसिमिक मिश्रण एवं पृथ्थकरण (Resolution of Racemic Mixture)–

किसी सममित यौगिक से असममित यौगिक का विरचन किया जाये तो सामान्यतः एक रेसिमिक मिश्रण (dl) प्राप्त होता है। इसके विपरीत प्रकृति में उत्पन्न सभी ध्रुवण घूर्णक यौगिक d या l किसी एक रूप में ही उत्पन्न होते है जिसमें भी मुख्यतः d समावयवी ही प्राप्त होते है। हम जानते है कि प्रकाशित समावयवियों में प्रकाशित गुणों के अतिरिक्त समस्त भौतिक एवं रासायनिक गुणधर्म पूर्णतः समान होते है। यही कारण है कि dl-रेसिमिक मिश्रण से (d) एवं (l) समावयवियों को वियोजित अर्थात् पृथ्थकरण अत्यन्त कठीन कार्य है। कुछ विशिष्ट विधियों से ही ऐसा वियोजन किया जा सकता है जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण विधियॉ निम्न है–

1. यांत्रिक वियोजन–

लुई पाश्चर (1848) में सर्वप्रथम इस विधि को विकसित किया और सोडियम अमोनियम टार्टरेट के d एवं l समावयवियों का पृथक किया। यह विधि केवल क्रिस्टलीय ठोस प्रकाशिक सक्रिय यौगिकों पर ही प्रयुक्त की जा सकती है। ऐसे यौगिक के d एवं l क्रिस्टल भिन्न दिखाई देते है और परस्पर एक दूसरे के दर्पण प्रतिबिम्ब होते है जो कि एक दूसरे पर आध्यारोपित नही होते हैं। अतः सुक्ष्मदर्शी का उपयोग कर चिमटी से पकड़कर दोनों प्रकार के क्रिस्टलों को पृथक कर लिया जाता है। स्पष्ट है कि यह विधि अत्यधिक समय एवं श्रम व्यय करती है और केवल क्रिस्टलीय ठोसों पर ही प्रयुक्त की जा सकती है।

2. जैव रासायनिक वियोजन –

इस विधि का सिद्धान्त यह है कि कुछ सूक्ष्म जीवी जैसे जीवाणु, यिस्ट, कवच इत्यादि को जब रेसिमिक मिश्रण में पनपने दिया जाता है तो ये d अथवा l में से किसी एक समावयव को चयनात्मक रूप से चट कर जाते है अर्थात् नष्ट कर देते है। इस प्रकार कस मिश्रण में से केवल एक ही प्रकाशिक समावयव शेष रह जाता है।

उदाहरणार्थ अमोनियम टार्टरेट के dl- रेसिमिक मिश्रण में पेनिसिलियम ग्लेयूकम नामक कवच को पनपने दिया जाता है तो यह विलयन में से d- प्रतिबिम्ब समावयव को नष्ट कर देते है जिससे l-अमोनियम टार्टरेट प्राप्त होता है।

इसी प्रकार dl- ऐमिनों अम्ल के रेसिमिक मिश्रण का ऐसिटिलीकरण करते है जिससे एमिनों समूह परिरक्षित किया जा सके। अब इस रेसिमिक मिश्रण मे यीस्ट को पनपने दिया जाता है जहाँ एन्जाइम ऐमाइलेज l- ऐसिटिल व्युत्पन्न को चयनात्मक रूप से जल–अपघटन करके नष्ट कर देता है जबकि d- व्युत्पन्न अप्रभावित होता है। d- ऐसिटिल व्युत्पन्न का जल अपघटन कर d- ऐमिनों एसिड प्राप्त कर लिया जाता है।

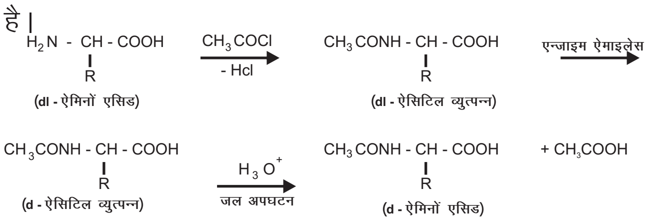

इन विधियों में निम्न कमियाँ है–

(i) उचित बेक्टीरियां का चयन एक कठिन कार्य है।

(ii) बैक्टीरियाँ तनु विलयन में पनपते है अतः पदार्थ तनु विलयन से पुनः प्राप्ति में काफी समय लगता है। पनपने में भी काफी समय लगता है।

(iii) एक समावयव को बेक्टीरियाँ खा कर नष्ट कर देता है अतः यह एक महंगी विधि है।

3. स्तम्भ वर्णलेखिकी विधि (Column Chromatographic Method)

ये सर्वाधिक उचित विधियाँ है जिनमें ध्रुवण घूर्णक या सामान्य अधिशोषक (Adsorbent) का स्तम्भ लगाकर इसके ऊपर रैसिमिक मिश्रण के विधिवत तैयार विलयन को डाल दिया जाता है। स्तम्भ का उचित विलयन में प्रक्षालन (Eluant) किया जाता है तो स्तम्भ में लिये गये अधिशोषक पर रैसिमिक मिश्रण का वरणात्मक अधिशोषण (Selective Adsorpation) होता है। अधिक तीव्रता से अधिशोषित होने वाला प्रतिबिम्बि समावयव स्तम्भ के ऊपरी भाग में ही अधिशोषित हो जाता है जबकि दूसरा प्रतिबिम्बि समावयव जो कि अपेक्षाकृत कम अधिशोशित होता है, प्रक्षापक के साथ स्तम्भ में नीचे आकर अधिशोषित होता है। दोनों समावयव एक के बाद दूसरा कॉलम के नीचे से बाहर आते है। पहले नीचे आने वाले समावयव को वाष्पन द्वारा पुनः प्राप्त कर लिया जाता है। दूसरा समावयव देरी से नीचे पहुंचता है अतः उसे अलग पात्र में एकत्र कर आसवन द्वारा पुनः प्राप्त कर लिया जाता है।

उदाहरणार्थ हेण्डरसन तथा रूल (Henderson and Rule) ने 1939 में सर्वप्रथम कैम्फर व्युत्पन्न (p-फेनिलीन बिस इमिनों केम्फर) के वियोजन हेतु D- लैक्टोस को अधिशोषक के रूप में उपयोग में लेकर d एवं l समावयवियों को पृथक किया था।

4. रासायनिक विधियॉ–

ये रेसिमिक मिश्रण के वियोजन हेतु सर्वाधिक प्रयुक्त की जाने लगी है जो इस सिद्धान्त पर आधारित है कि ''प्रतिबिम्बी समावयवियों (Enentiomers) के भौतिक गुण पूर्णतः समान होते है परन्तु विवरिम समावयवियों या अप्रतिबिम्बि समावयव (Distereoisomers) के भौतिक गुण भिन्न–भिन्न होते है।'' अतः उन्हें सरतापूर्वक पृथक किया जा सकता है।

इस प्रक्रम में रेसिमिक मिश्रण का लवण निर्माण किया जाता है जो प्रतिबिम्बि समावयवियवों को परस्पर विवरिम समावयवियों में रूपान्तरित कर देते है। प्राप्त विवरिम समावयवी भौतिक विधियॉ जैसे प्रभाजी क्रिस्टलीय, आसवन, विलेयता द्वारा पृथक कर लिया जाता है इनमें से मूल प्रतिबिम्ब समावयवों को जल अपघटन द्वारा पुनः प्राप्त कर लेते है। निम्न प्रकार–

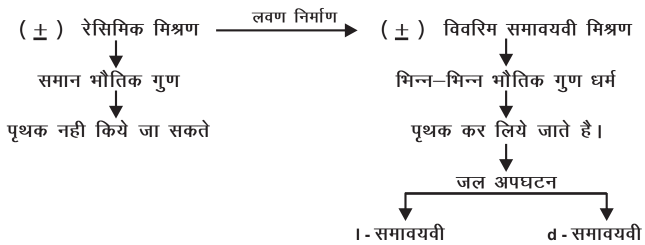

संरूपण समावयवता (Conformational Isomerism) –

इसमें उन समावयवियों का अध्ययन किया जाता है जो कार्बन–कार्बन σ – बन्ध के मुक्त घूर्णन (Free Rotation) से उत्पन्न होते है। इस प्रकार की समावयवता प्रदर्शित करने हेतु आवश्यक ऊर्जा 3–15 किलो कैलोरी प्रतिमोल के क्रम की होती है जो कमरे के ताप पर स्वतः ही उपलब्ध है। एकल बन्ध पर मुक्त घूर्णन के परिणामस्वरूप परमाणुओं की विभिन्न सापेक्षित त्रिविम व्यवस्थाएँ प्राप्त होती है जो एक दूसरे में आसानी से रूपान्तरित हो जाती हो, संरूपण (Conformation) कहलाती है तथा प्राप्त विभिन्न संरचनाएँ संरूपण समावयवी कहलाते है। ये परस्पर विलगित नहीं किये जा सकते क्योंकि कमरे के ताप पर सतत रूप से कार्बन–कार्बन σ बन्ध का मुक्त घूर्णन द्वारा स्वतः ही होता रहता है। चूंकि σ – बन्ध के घूर्णन से उत्पन्न होती है अतः इसे घूर्णन या चक्रण समावयवता भी कहते है।

[I] ऐथेन में संरूपण –

ऐथेन में दो sp^3 संकरित कार्बन परस्पर σ बन्ध से बन्धित है जो मुक्त घूर्णन से विभिन्न संरूपण व्यवस्थायें प्राप्त करता है परन्तु उनमें से केवल दो संरचनाएँ ही अधिक महत्वपूर्ण है। अतः ऐथेन के दो संरूपीय समावयवीं होते है जिन्हें क्रमशः ग्रसित (Eclipsed) एवं अन्तरित या सान्तरित (Staggered) संरूप कहते है।

किसी भी अणु के विभिन्न संरूपणों को प्रदर्शित करने की दो शैलियां है–

1. न्यूमान प्रक्षेपण (Newmann Projection)
2. सॉहार्स प्रक्षेपण (Sawhorse Projection)

न्यूमोन प्रक्षेपण में एक अणु को C-C अक्ष के प्रति इस प्रकार देखा जाता है कि सामने वाला एक कार्बन पिछे स्थित दूसरे कार्बन को पूरी तरह ढक देता है। अग्र कार्बन के शेष तीन σ बन्ध उसके केन्द्र से निकलकर परस्पर 120^0 पर दिखाई देते है जबकि पिछे के कार्बन का केन्द्र छिपा हुआ होने से वृत्त की परीधि के बाहर से परस्पर 120^0 कोण पर निकलते हुये दिखाई देते है। तीन अग्र एवं पश्च तीन, कुल मिलाकर छः σ – बन्ध हो जाते है एथेन में ये छः बन्ध H परमाणुओं द्वारा जुड़े होते है। अब यदि अग्र कार्बन के तीनों H– परमाणु पश्च कार्बन के तीनों H– परमाणुओं को पूरी तरह से ढ़क लेते है तो ऐसा संरूप ग्रसित संरूप कहलाता है। इसके विपरीत यदि अग्र कार्बन के तीनों H–परमाणुओं के बिलकुल मध्यवर्ती क्षैत्रों में पश्च कार्बन के H– परमाणु दिखाई देते हैं तो ये अन्तरित संरूप (सान्तरित संरूप) कहलाता है। चित्रानुसार–

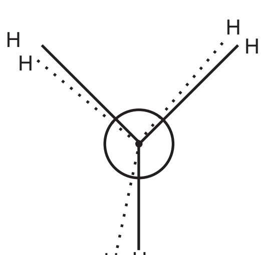

(ग्रसित संरूप)

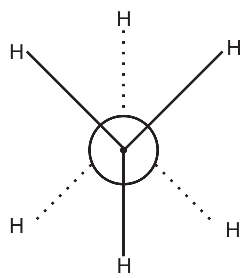

(अन्तरित संरूप)

(एथेन में संरूपण – न्यूमान प्रेक्षपण सूत्रों द्वारा)

सॉहार्स प्रक्षेपण में अणु को कागज के तल के लम्बवत C-C बन्ध अक्ष से थोड़ा हटकर किसी कोण पर देखा जाता है। एक कार्बन के तीनों H परमाणु एवं दूसरे कार्बन के तीनों H परमाणु परस्पर एक ही दिशा या सिध में अभिविन्यसित होते है तो यह ग्रसित संरूप कहलाता है। इसके विपरीत एक कार्बन के तीनों H– परमाणुओं के मध्य तलों में दूसरे कार्बन के तीनों H– परमाणु स्थित होते है तो यह अन्तरित संरूप होता है।

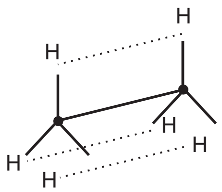

(ग्रसित संरूप)

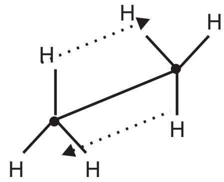

(अंतरित संरूप)

(एथेन में संरूपण–सॉहार्स प्रक्षेपण सूत्रों द्वारा)

यह स्पष्ट है कि σ – बन्ध किसी भी कोण से घूमाया जा सकता है सैद्धान्तिक रूप से संरूपों की संख्या अनन्त होती है परन्तु हम दो प्रकार के चरम (अधिकतम) स्थितियों पर ही विचार करते है जो क्रमशः ग्रसित एवं अन्तरित संरूप कहलाते है। अब यदि दोनों पर ऊर्जा चिन्तन किया जाये तो ग्रसित संरूप के H परमाणुओं के (दोनों कार्बनों के) मध्य कम दूरी है अतः अपेक्षाकृत कम स्थायी होता है। अन्तरित संरूप में दो कार्बनों के H परमाणु परस्पर अधिकतम संभाव्य दूरी पर स्थित है अतः इनमें न्यूनतम त्रिविम बाधा है। अतः अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है। दोनों में ऊर्जा अन्तर मात्र 3 किलो कैलारी प्रति मोल है जो कि कक्ष के ताप पर वातावरण में स्वतः उपलब्ध है परिणाम स्वरूप ये संरूप सतत रूप से एक दूसरे में रूपान्तरित होते रहते हैं और इन्हें विलग नही किया जा सकता है।

[II] वलयतंत्र में संरूपण (Conformation in Cyclic Systems) –

इस श्रेणी में सर्वाधिक उचित उदाहरण साइक्लोहेक्सेन को लिया जा सकता है। साइक्लोंहेक्सेन के सभी कार्बन sp^3 संकरित होते है अतः परस्पर $109^0 28'$ के कोणों पर अभिविन्यसित होते है और इसी कारण यह समतल षटकोणिय संरचना में नही हो सकती है। वास्तव में साइक्लों हेक्सेन की संरचना या तो कुर्सी के आकार में या एक नौका के आकार में ही हो सकती है। मोर (1918) ने बताया कि साइक्लोहेक्सेन के कुर्सी एवं नौका दो संरूप होते है जिनके मध्य ऊर्जा अन्तर 6–7 किलो कैलोरी प्रतिमोल होता है अतः कमरे के ताप पर तेजी से एक दूसरे में अन्तर परिवर्तित होती रहती हैं। इनमें भी कुर्सी संरूप अधिक स्थायी होता है जो अन्तरित संरूप है। कुर्सी संरूप मरोड़ी विकृति से मुक्त होता है। कुर्सी संरूप में साइक्लोहेक्सेन वलय के विपरीत कार्नर के कार्बनों C_1 एवं C_4 पर उपस्थित H परमाणुओं के मध्य अधिकतम दूरी होती है। न्यूमान प्रक्षेपण द्वारा साइक्लो हेक्सेन के कुर्सी एवं नौका संरूप निम्न प्रकार प्रदर्शित किये जा सकते है–

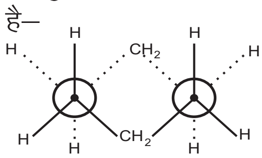

(कुर्सी संरूप–अधिक स्थायी)
(Chair Form)

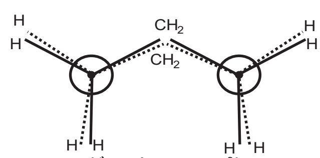

(नौका–संरूप, कम स्थायी)
(Boat Form)

(साइक्लोहेक्सेन में संरूपण–न्यूमान प्रक्षेपण सूत्रों द्वारा)

सॉहार्स प्रक्षेपण में साइक्लोहेक्सेन के दोनों संरूप निम्न प्रकार प्रदर्शित किये जा सकते है।

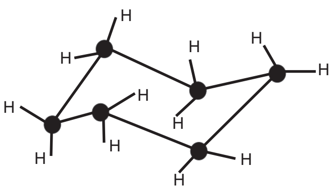

(कुर्सी संरूप)

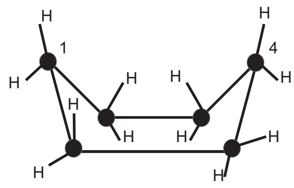

(नौका संरूप)

(साइक्लोहेक्सेन में संरूपण–सॉहार्स प्रक्षेपण सूत्रों द्वारा)

नौका संरूप भी कोणिय तनाव मुक्त होता है परन्तु इसमें C_1 एवं C_4 के H परमाणु ग्रसित होने से बहुत निकट आ जाते है और एक दूसरे पर त्रिविम बाधा डालते है। इन्हें 'फ्लेगपॉल' (Flagpole) हाइड्रोजन कहते है और इसी कारण कुर्सी रूप की ऊर्जा की तुलना में नौका संरूप की ऊर्जा 7.1 कि.कै. प्रतिमोल अधिक होती है। कुर्सी रूप में विपरीत कोने पर स्थित हाइड्रोजन परस्पर अधिकतम दूरी पर होते है जो स्थायित्व प्रदान करते है।

अक्षीय एवं भूमध्यीय हाइड्रोजन (Axial and Equatorial Hydrogen Atoms)–

ऊर्जा अन्तर 7.1 कि.कै. प्रतिमोल होने के कारण कमरे के ताप पर साइक्लोहेक्सेन की 99% मात्रा कुर्सी संरूप में ही पायी जाती है। साइक्लो हेक्सेन में कुल 12 H परमाणु उपस्थित होते हैं जिन्हें एक मॉडल बनाकर देखा जाये तो दो श्रेणीयों में विभाजित किया जा सकता हैं। छः परमाणु वलय के लम्बवत्, एकान्तर क्रम में तीन ऊपर एवं तीन नीचे की ओर अभिविन्यसित होते है, जो अक्षीय हाइड्रोजन कहलाते है। शेष छः हाइड्रोजन भूमध्यीय या विषुवतीय कहलाते है। ये भी दो समूहों में विभाजित होते है, तीन थोड़ा ऊपर उठे हुए एवं एकान्तर में स्थित शेष तीन थोड़ा सा नीचे झुके हुए जिससे कि एक ही कार्बन के अक्षीय एवं भूध्यीय हाइड्रोजन के मध्स H-C-H कोण $109^{\circ}28$ का प्राप्त हो जाता है। चित्रानुसार

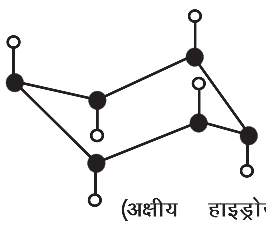

(अक्षीय हाइड्रोजन)
(Axial Hydrogens)

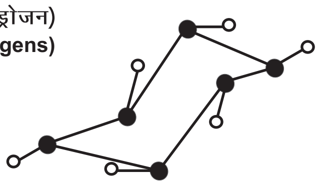

(भूमध्यीय हाइड्रोजन)
(Equatorial Hydrogens)

सभी को एक साथ निम्न प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है–

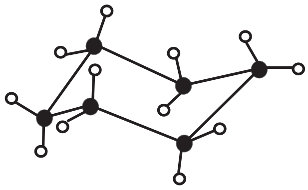

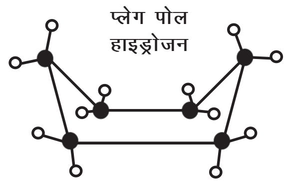

नौका संरूप में उक्त संरचना में दर्शाये अनुसार दो शीर्ष हाइड्रोजन समुद्री जहाजों पर लगाये जाने वाले झण्डों (फ्लेग) की तरह दिखाई देते हैं अतः ये फ्लेगपोल हाइड्रोजन कहलाते हैं।

त्रिविम रसायन का महत्व (Importance of Stereochemistry)–

अनेक कार्बनिक यौगिकों का अणुसूत्र एवं संरचनाएँ समान होती है परन्तु यौगिक में उपस्थित विभिन्न परमाणु या समूहों की त्रिविम में स्थितियाँ भिन्न–भिन्न होती है। इस प्रकार का अध्ययन त्रिविम रसायन में किया जाता है। त्रिविम में यौगिक की संरचना से हम अपने मानस पटल में उसके स्वरूप को अंकित करते है। इसी ज्ञान से हम अनेक नये यौगिकों के संश्लेषण की संभावनाओं को तलासते है और नविन शोधकार्यो को सम्पादित कर पाते है। इस ज्ञान से रासायनिक अभिक्रियाओं की क्रियाविधि को समझने में सफल होते है जिससे अनेक अन्य अभिक्रियाओं की क्रियाविधियों को समझने में सहायता मिलती है। अनेक लेखक त्रिविमीय संरचना सूत्रों से अभिक्रियाओं को अपने लेखन में सम्मिलित करने लगे है जिससे विद्यार्थियों को अधिक सरलता से समझाया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Question)

1. निम्न में से कौनसा त्रिविम समावयवता की श्रेणी में नहीं आता है?
   (a) ज्यामितीय समावयवता (b) संरूपण समावयवता
   (c) क्रियात्मक समूह समावयवता
   (d) प्रकाशित समावयवता

2. निम्न में से कौनसा यौगिक ज्योमितीय समावयवता प्रदर्शित नही करता है।
   (a) CH_3-CH=CH-CH_3 (b) Cl-CH=CH-Cl
   (c) CH_3-C(OH)=C(OH)-CH_3 (d) $(Ch_3)_2$ C = CH-CH_3

3. प्रकाशित समावयवता के संदर्भ में कौनसा कथन सत्य है
   (a) अणु में सममिति अक्ष उपस्थित हो।
   (b) अणु में सममिति तल उपस्थित हो।
   (c) अणु में सममिति केन्द्र उपस्थित हो।
   (d) उक्त में से कोई नही।

4. मीसों टार्टरिक अम्ल ध्रुवण घूर्णकता प्रदर्शित नही करता है क्योंकि–
(a) उसमें दो किरेल केन्द्र उपस्थित है।
(b) उसमें बाह्य प्रतिकार हो जाता है।
(c) उसमें सममिति तल विद्यमान है।
(d) उसमें एरिथ्रो रूप उपस्थित है।

5. निम्न में से कौनसा यौगिक प्रकाशित समावयवता प्रदर्शित नही करता है?
(a) एथिल एल्कोहॉल (b) 2–ब्युटेनॉल
(c) 2–क्लोरो प्रोपेन (d) लेक्टीक अम्ल

6. फिशर प्रक्षेपण सूत्र लिखने के लिए कौनसा कथन सत्य नही है?
(a) परस्पर काटती हुई दो लम्बवत रेखायें खींची जाती है
(b) प्रथम क्रमांक वाला कार्बन बांयी ओर रखा जाता है
(c) क्षैतिज तल के दोनों समूह ऊपर की ओर ऊपर की ओर प्रेक्षिपित होते है।
(d) अणु के तल को 180 से घूमाया जा सकता है।

7. सापेक्ष विन्यास के लिए संदर्भ के रूप में से किसे आधार बनाया गया?
(a) लेक्टीक अम्ल को
(b) टार्टरिक अम्ल को
(c) ग्लिसरैल्डीहाइड को
(d) सोडियम पोटेशियम टार्टरेट को

8. रैसिमिक मिश्रण के वियोजन में निम्न में से कौनसी विधि प्रयुक्त नही की जा सकती है।
(a) जैव रासायनिक विधि (b) यांत्रिक विधि
(c) प्रभाजी आसवन विधि (d) कॉलम क्रोमेटोग्राफी विधि

9. संरूपण समावयवता के संदर्भ में कौनसा कथन सत्य नहीं है।
(a) न्यूमान एवं सॉहार्स प्रक्षेपण सूत्रों से प्रदर्शित किये जा सकते है।
(b) संरूपीय समावयवियों की संख्या अनन्त होती है।
(c) ग्रसित संरूप सर्वाधिक स्थायी होता है।
(d) वलय तंत्रों में भी संरूपण समावयवता पायी जाती है।

10. विवरिम समावयवियों के संदर्भ में कौनसा कथन सत्य नही है।
(a) ये प्रकाशित ध्रुवण घूर्णकता प्रदर्शित करते है।
(b) इन समावयवियों के भौतिक गुणों में भिन्नता पायी जाती है।
(c) इनमें आन्तरिक प्रतिकार होता है।
(d) ये समतल ध्रुवित प्रकाश को प्रर्कीणित कर देते है।

उत्तर – 1 (c), 2 (d), 3 (d), 4 (c), 5 (a), 6 (b), 7 (c), 8 (c), 9 (c), 10 (d)

अतिलघुउत्तरात्मक –

1. समावयवतता को परिभाषित कीजिए।
2. त्रिविम सामवयवता से क्या तात्पर्य है?
3. प्रकाशीय सक्रियता क्या है?
4. प्रकाशिक समावयवता के लिए क्या आवश्यक शर्त है?
5. सममिति के तत्त्व बताइये।
6. मीसो रूप प्रकाशिक सक्रिय नहीं होता, क्यो?
7. रेसीमिकरण क्या है?

लघुउत्तरात्मक –

1. ध्रुवण घूर्णकता की परिभाषा लिखिए। उदाहरण सहित बताइये कि यह कैसे अणुओं से मिलती है।
2. 1–ब्युटेनॉल प्रकाशिकसमावयवता नहीं दिखाता जबकि 2–ब्यूटेनॉल दिखाता है, क्यो?
3. प्रकाश सक्रियता के लिए आवश्यक शर्ते क्या हैं? प्रकाश सक्रिय अणुओं के उदाहरण दीजिए।
4. लैक्टिक अम्ल के दो प्रकाशिक समावयवता की विवेचना कीजिए।
5. उपयुक्त उदाहरण देकर रैसिमीकरण की व्याख्या कीजिए।
6. उपयुक्त उदाहरण लेकर इरिथ्रो व थ्रियो युग्त को समझाइये।
7 निरपेक्ष विन्यास से आप क्या समझते है?
8. संरूपण और विन्यास में अन्तर समझाये।
9. ज्यामितीय समावयवता से क्या तात्पर्य है? ज्यामितीय समावयवता की आवश्यक शर्ते लिखिए।
10. ऑक्सिम द्वारा प्रदर्शित त्रिविम–समावयवता का वर्णन कीजिए।
11. संरूपण क्या है? एथेन के विभिन्न संरूपणों के न्यूमान प्रक्षेप बनाइये।
12. प्रतिबिम्ब रूपों के वियोजन की लवण निर्माण विधि का वर्णन कीजिए।

निबन्धात्मक

1. टार्टरिक अम्ल के प्रकाशिक समावयवता की विवेचना कीजिए।
2. दर्पण प्रतिबिम्बव विवरिम समावयवता को उदाहरण सहित समझाइये।
3. त्रिविम समावयवता को समझाइये। टार्टरिक अम्ल की

त्रिविम समावयवता की विवेचना कीजिए तथा उसके सब संरचना सूत्र लिखिए। समझाइये कि टार्टरिक अम्ल जब भी संश्लेषित किया जाता है जब ही ध्रुवण अघूर्णक होता है।

4. प्रकाशिक समावयवता से आप क्या समझते है? दो सममित कार्बन परमाणु वाले यौगिकों में प्रकाशिक समावयवता की विवेचन कीजिए।

5. टार्टरिक अम्ल में त्रिविम समावयवता को समझाइए। टार्टरिक अम्ल के कितने प्रकाशित समावयवर सम्भव है? मेसो एवं रैसीमिक टार्टरिक अम्ल में क्या अन्तर है?

6. ज्यामितीय यौगिकों के भौतिक गुण भिन्न–भिन्न होते है, किन्तु प्रकाशिक समावयवियों के भौतिक गुण एक से होते है। कारण सहित समझाइये।

17

दैनिक जीवन में रसायन

(Chemistry in Daily Life)

17.1 मानव स्वास्थ्य में रसायन

रसायन विज्ञान ने जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। इनमें प्रमुख है मानव स्वास्थ्य की देखभाग के लिए उपयोग में ली जाने वाली दवाईयाँ या औषधियाँ। वायुमण्डलीय प्रदूषण, आनुवांशिक अनियमितताएँ, दुर्घटना, जीवाणु संक्रमण आदि कारणों से मानव शरीर बीमारियों से ग्रस्त होता है। जिनके उपचार व रोगों से बचाव के लिए विभिन्न औषधियों का उपयोग किया जाता है। चिकित्सा विज्ञान की विभिन्न पद्धतियाँ जैसे–आयुर्वेद, यूनानी, ऐलोपेथी में काम में ली जाने वाली औषधियाँ वस्तुतः प्राकृतिक रूप से प्राप्त या रसायन शास्त्रकारों द्वारा संश्लेषित रसायन पदार्थ ही होते है। रसायनों के चिकित्सकीय उपयोग को रसायन चिकित्सा कहते हैं।

औषधियाँ साधारणतया बहुत कम आणविक द्रव्यमान की रसायन होती है, जो शरीर में होने वाले विभिन्न जैव प्रक्रमों में सम्मिलित लक्ष्य जैव अणुओं जैसे– कार्बोहाइड्रेट, लिपिड, प्रोटीन, न्युक्लिक अम्लों से अन्योन्य क्रिया करके चिकित्सकीय रूप से लाभदायक प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है। इन लाभदायक प्रतिक्रियाओं से मानव व जीव–जन्तुओं में होने वाले रोगों का निदान व उपचार संभव होता है।

एक चिकित्सक रोग के लक्षण के आधार पर उचित औषधि का चयन करता है। औषधि के चयनीकरण में औषधियों का वर्गीकरण लाभदायक है। औषधियों को विभिन्न मानदण्डों के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है जैसे– फार्माकोलोजिकल प्रभाव, रासायनिक संरचना, लक्ष्य अणु का प्रकार आदि। सदैव चिकित्सक द्वारा अनुशंषित मात्रा में ही औषधि का सेवन करना चाहिए। अनुशंषित मात्रा से अधिक मात्रा का सेवन करने पर औषधि विषकारी हो जाती है और मृत्यु भी हो सकती है। स्वस्थ हो जाने पर औषधि का उपयोग बंद कर दिया जाता है।

आइये अब हम विभिन्न वर्गों की औषधियों के कार्य, संरचना व चिकित्सकीय प्रभाव का अध्ययन करते हैं।

17.1.1 पीड़ाहारी (Analgesics)

वे रसायन जो पीड़ा या दर्द को कम करने के लिए प्रयुक्त होते है, पीड़ा हारी या दर्द निवारक औषध कहलाते है। ये यह तंत्रिका सक्रिय औषध है। ये दो प्रकार के होते है :

(i) **अस्वापक (Non Narcotic) औषध** : ये सामान्य पीड़ाहारी है जिनके सेवन से व्यक्ति इनका आदि नहीं होता है। इन पीड़ाहारी औषधि में ज्वरनाशी लक्षण भी पाये जाते हैं (Antipyretics)। **उदाहरण–** ऐस्पिरिन, पैरासिटामॉल अस्वापक पीड़ाहारी है।

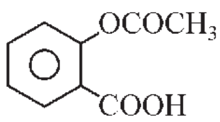

ऐस्प्रिन
(2–ऐसीटॉक्सी बेन्जोइक अम्ल)

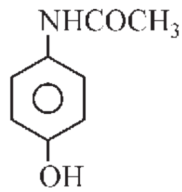

पैरासीटेमॉल
(4–ऐसीटैमिडोफीनॉल)

ऐस्प्रिन को कभी भी खाली पेट नहीं लेना चाहिये। ऐस्प्रिन जल अपघटित होकर सैलिसिलिक अम्ल बनाता है, यह अम्ल आमाशय के रिक्त होने पर उसकी दीवारों पर घाव कर देता है।

(ii) **स्वापक (Narcotics) पीडाहारी** : तीव्रता व असहय दर्द होने पर ऐसी पीड़ाहारी औषधियाँ का उपयोग किया जाता है जो निद्रा व अचेतना उत्पन्न करती है। इन्हें स्वापक पीड़ाहारी कहते है। इनका सेवन करने से व्यक्ति इनका आदि हो जाता है। जैसे– मॉर्फीन, कोडीन, हशीस (हैरोइन) आदि।

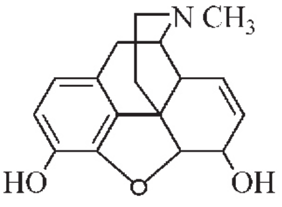

मॉर्फीन

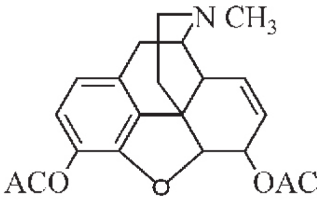

हेरोइन

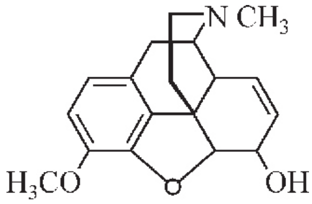

कोडीन

17.1.2 प्रशांतक (Tranquillizers)

वे रसायन जिनका उपयोग मानसिक रोगों के निदान व उपचार में किया जाता है, प्रशांतक कहलाते है। ये तंत्रिका सक्रिय औषध है तथा केन्द्रीय तंत्रिका तत्र पर प्रभाव डालते है। ये व्यग्रता, चिन्ता, तनाव, क्षोभ से मुक्ति देते है। इनका निद्राकारी प्रभाव होता है, अतः ये सभी नींद की गोलियों के आवश्यक घटक है। **उदाहरण–** मेप्रोबमेट, इक्वैनिल, क्लोरडाइजेपॉक्साइड आदि।

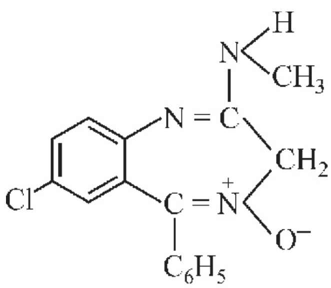

क्लोर डाइजेपॉक्साइड

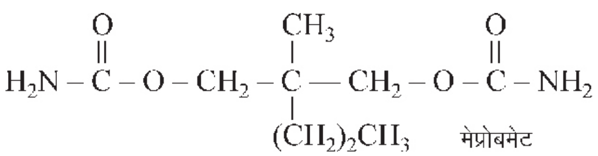

मेप्रोबमेट

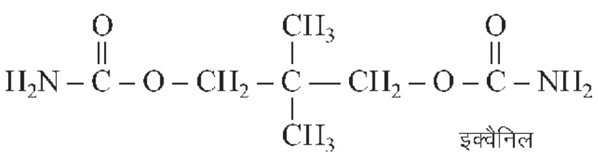

इक्वैनिल

बार्बिट्यूरेट्स : बार्बिट्यूरिक अम्ल के व्युत्पन्न प्रशांतक के रूप में काम लिये जाते है। इनके प्रयोग से नींद आती है। उदाहरणः वेरोनल, ल्यूमीनल, सेकोनल आदि।

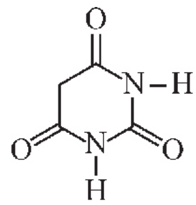

बार्बिट्यूरिक अम्ल

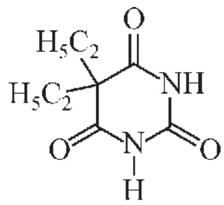

बेरोनल

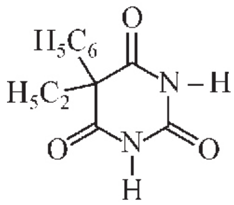

ल्यूमीनल

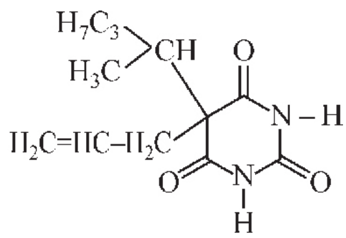

सेकोनल

17.1.3 प्रतिसूक्ष्मजीवी (Antimicrobials)

वे रसायन जो सूक्ष्मजीवों जैसे बैक्टीरिया, वाइरस, कवक, फफूंद आदि की वृद्धि को रोकने है या इन्हें नष्ट करते है। प्रतिसूक्ष्मजीवी कहलाते है।

मनुष्य तथा जीवों में कई रोग विभिन्न सूक्ष्मजीवों जैसे–जीवाणु, वायरस, कवक तथा परजीवियों द्वारा उत्पन्न हो सकते है। प्रतिसूक्ष्मजीव की प्रकृति के आधार पर उनकी वृद्धि रोकने या नष्ट करने के लिए जीवाणुओं, कवक, वायरस, परजीवी के लिए क्रमशः प्रति जीवाणु, प्रतिकवक, प्रतिवायरस, प्रतिपरजीवी औषध प्रयुक्त किये जाते है।

सूक्ष्मजीव अत्यन्त छोटे आकार के होते है। इन्हें सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही देखा जा सकता है। शरीर में कई ऐसे पदार्थ स्त्रवित होते है, जो इन सूक्ष्म जीवों को नष्ट कर देते है किन्तु यदि इन पदार्थों के स्त्रावित होने में कोई त्रुटि हो जाए तो ये सूक्ष्मजीव जीवित उत्तकों तक पहुँचकर विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न करते हैं। इन सूक्ष्म जीवों के द्वारा उत्पन्न रोगों पर नियन्त्रण तीन प्रकार से किया जा सकता है :

(i) ऐसी औषधि के उपयोग द्वारा जो शरीर में उपस्थित सूक्ष्मजीवों को मार देती है। ये औषधियाँ जीवाणु नाशी कहलाती है।

(ii) ऐसी औषधि के उपयोग द्वारा जो सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकती है। ये औषधियाँ जीवाणु रोधी कहलाती है।

(iii) शरीर की प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि करके।

प्रतिजैविक तथा पूतिरोधी, प्रतिसूक्ष्मजैविक औषधियाँ है।

17.1.4 प्रतिजैविक (Antibiotic)

वे रसायन जो जीवाणुओं, कवक एवं फफूंद द्वारा उत्पन्न होते है और मनुष्य व अन्य जीवों के शरीर में संक्रामक रोग उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोक देते है या उन्हें नष्ट कर देते है, प्रति जैविक कहलाते है।

ऐसे यौगिको का संश्लेषण भी किया गया है जो प्रतिजैविक की तरह कार्य करते है। अतः अन्य शब्दों में प्रतिजैविक आंशिक या पूर्ण रूप से संश्लेषित वे रसायन है जो सूक्ष्मजीवों के उपापचयी प्रक्रमों में अवरोध उत्पन्न करके उनकी वृद्धि को रोकते हैं या उन्हें नष्ट करते हैं।

सर्वप्रथम उन्नीसवी सदी में जर्मन जीवविज्ञान पॉल एर्डिश ने सिफलिस के ईलाज के लिये आर्सफेनेपीन बनाई जिसे सैल्वरसैन भी कहा जाता है। सन् 1932 में एक अन्य प्रतिजीवाणु प्रॉन्टोसिल का निर्माण किया गया। प्रोन्टोसिल की संरचना सैल्वरसैन के सदृश होती है। प्रोन्टोसिल में -As=As- बन्ध के स्थान पर -N=N- बन्ध होता है।

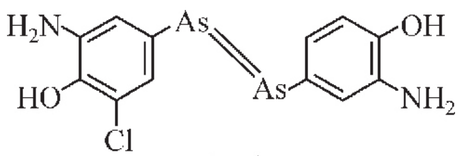

सैल्वरसेन

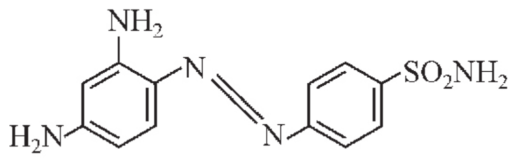

प्रॉन्टोसिल

प्रॉन्टोसिल की क्रियाशीलता इसमें स्थित P-एमीनों बेंजीन सल्फोनामाइड ($-C_6H_4SO_2NH_2$) भाग द्वारा होती है। इस प्रकार सल्फा औषधियों की खोज हुई और कई सल्फोनैमाइड व्युत्पन्न संश्लेषित किये गये।

सन् 1929 में अलेक्जैण्डर फ्लेमिंग ने फफूंद पेनिसिलियम नोटेटम से प्रतिजैविक की खोज की और इसका नाम बेनिसिलीन रखा। पेनिसिलीन के पृथक्करण, शोधन के पश्चात् चिकित्सकीय परीक्षण के लिए पर्याप्त मात्रा में एकत्र करने में उन्हें तेरह वर्ष लगे। इस कार्य के लिए फ्लेमिंग को 1945 में चिकित्सा का नोबल पुरस्कार दिया गया।

प्रतिजैविक दो प्रकार के होते है–

(i) **जीवाणुनाशी :** ये सूक्ष्म जीवाणुओं को मारते है। उदाहरणः पेनिसिलिन, ऑफ्लोक्सासिन, ऐमीनो ग्लाइकोसाइड।

(ii) **जीवाणु निरोधी :** ये सूक्ष्म जीवाणुओं पर निरोधक प्रभाव डालते है। उदाहरण : क्लोरैम्फनिकॉल, ऐरिथ्रोमाइसिन, टेट्रासाइक्लीन आदि।

जीवाणु दो प्रकार के होते है ग्रैम पॉजिटिव तथा ग्रेम नेगेटिव। सूक्ष्म जीवाणुओं की वह परास जिस पर प्रतिजीवाणु प्रभावकारी होते है, स्पैक्ट्रम कहलाती है। इस आधार पर प्रतिजीवाणु तीन प्रकार के होते है –

(i) **विस्तृत (Broad) स्पैक्ट्रम प्रतिजीवाणु –** वे प्रतिजीवाणु जो ग्रेम पॉजीटिव तथा ग्रेम नेगेटिव दोनों प्रकार के जीवाणुओं के विस्तृत परास का विनाश करते है या निरोध करते है। उदाहरण : ऐम्पिसिलिन, ऐमोक्सिसिलिन।

(ii) **संकीर्ण (Narrow) स्पैक्ट्रम प्रतिजीवाणु –** ये प्रतिजीवाणु ग्रेम पॉजीटिव या ग्रेम नेगेटिव जीवाणुओं के प्रति प्रभावकारी होते है।

(iii) **सीमित स्पैक्ट्रम प्रतिजीवाणु–** ये प्रतिजीवाणु एक जीव या रोग पर प्रभावी होते है। उदाहरण– पेनिसिलिन G

प्रतिजैविक औषधियों की सहायता से कई संक्रामक रोगों का उपचार किया जाता है। ये अति विशिष्ट होते है तथा इनकी अल्प मात्रा भी सूक्ष्मजीवी पर अत्यन्त प्रभावी होती है। कुछ प्रमुख प्रतिजैविक निम्नलिखित है –

(A) पेनिसिलिन (Penicillin) :

कुल छह प्रकार की प्राकृतिक पेनिसिलिन विलगित की जा चुकी है। इनमें से पेनिसिलिन–G सर्वाधिक प्रयुक्त होती है।

ऐम्पिसिलिन तथा ऐमॉक्सिलीन दो पेनिसिलिन के नवीन अर्द्धसंश्लेषित रूप है। पेनिसिलिन का उपयोग न्यूमोनिया, ब्रॉन्काइटिस के उपचार में किया जाता है। किसी व्यक्ति को पेनिसिलिन देने से पूर्व इसके प्रति संवेदनशीलता की जांच अवश्य की जानी चाहिए क्योंकि कुछ व्यक्तियों में पेनिसिलिन लेने से प्रत्यूर्जता (Allergy) होने लगती है।

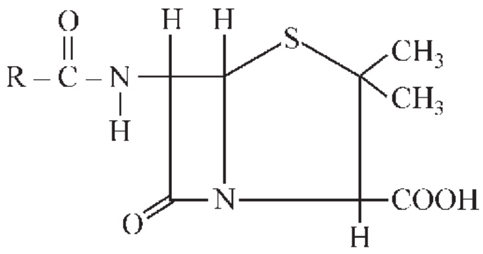

पेनिसिलिन की सामान्य संरचना

पेनिसिलिन G : R = 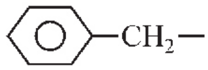

पेनिसिलिन P : $R = CH_3 - CH_2 - CH = CH - CH_2 -$

पेनिसिलिन K : $R = CH_3 - (CH_2)_6 -$

एम्पीसिलिन : 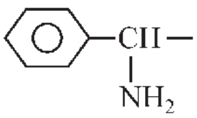

(B) क्लोरेम्फेनिकॉल (Chloramphenicol) :

इसे क्लारोमाइसेटिन भी कहते है। पेचिश, निमोनिया, मस्तिष्क ज्वर, टॉयफाइड आदि तीव्र संक्रमणों में इसक प्रयोग किया जाता है।

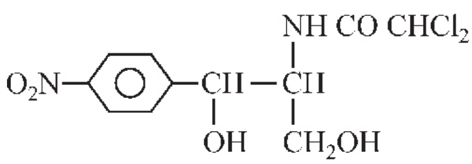

क्लोरेम्फेनिकॉल की संरचना

(C) स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)–

इसका उपयोग तपेदिक के उपचार में किया जाता है। यह एक विस्तृत स्पैक्ट्रम प्रतिजैविक है। मस्तिष्क व निमोनिया के उपचार में भी इसे प्रयुक्त किया जाता है।

(D) टेट्रासाइक्लिन (Tetracyclines) –

इस वर्ग के प्रमुख प्रतिजैविक है ऑरियोमाइसिन, टेरामाइसिन। ऑरियोमाइसिन का उपयोग नेत्र संक्रमण के उपचार में तथा टेरामाइसिन का उपयोग टायफॉयड के उपचार में किया जाता है।

(E) सल्फा औषधियाँ (Sulpha Drugs)–

ये सल्फेनिलैमाइड एवं इसके व्युत्पन्न है। कोकाई (Cocoi) संक्रमण से होने वाले रोगों के उपचार में इसका उपयोग किया जाता है। उदाहरण : सल्फाडाइजीन, सल्फागुआनिडीन, सल्फापिरिडीन, सल्फाथायाजोल आदि।

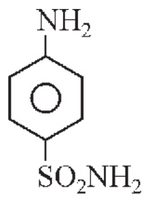

सल्फेनिलैमाइड

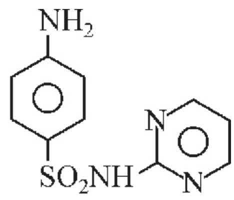

सल्फाडाइजीन

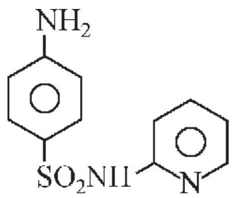

सल्फापिरीडीन

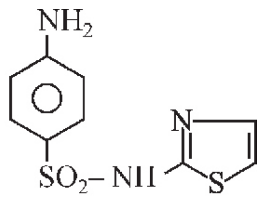

सल्फाथायाजोल

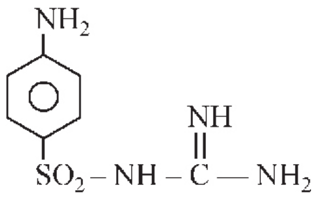

सल्फागुआनिडीन

17.1.5 पूति रोधी (Anticeptics)

वे रसायन जो हानिकारक सूक्ष्म जीवों की वृद्धि को रोकते है या उन्हें नष्ट करते है तथा जीवित ऊतकों को हानि नहीं पहुंचाते हैं, पूतिरोधी कहलाते है। पूतिरोधी का उपयोग जीवित ऊतकों पर जैसे त्वचा के कटने या घाव होने पर किया जाता है। पूतिरोधी का उपयोगी शरीर में बैक्टीरिया द्वारा अपघटन से उत्पन्न गंध को कम करने के लिए किया जाता है। इन्हें दुर्गंध नाशकों : माउथवाश, डियोडरेन्ट, टूथपेस्ट, टूथपाउडर, चेहरे के पाउडर में मिलाया जाता है।

साबुन में पूतिरोधी गुण डालने के लिए बाईथायोनल मिलाया जाता है।

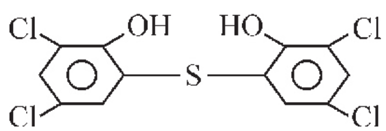

बाईथायोनल

आयोडीन एक प्रबध पूतिरोधी है। आयोडीन का ऐल्कोहॉल तथा पानी के मिश्रण में 2-3% विलयन, आयोडीन का टिंक्चर कहलाता है। सामान्यतः प्रयोग में लिया जाने वाला पूतिरोधी

डेटॉल है, जो कि क्लोरोजाइलिनॉल तथा टर्पीनियॉल का मिश्रण होता है।

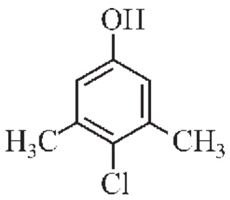

क्लोरो जाइलिनॉल

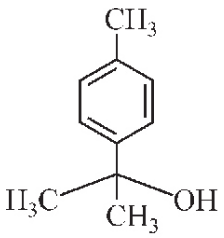

टर्पीनिथॉल

बोरिक अम्ल का तनु जलीय विलयन आँखों के लिए दुर्बल पूर्तिरोधी होता है।

17.1.6 प्रतिहिस्टैमिन या प्रति एलर्जी औषध (Antihistamines or Antiallergic Drugs)

वे रसायन जो एलर्जी के उपचार में प्रयुक्त होते है, प्रतिएलर्जी औषधियाँ कहलाती है। एलर्जी का कारण हिस्टेमीन नामक रसायन होता है जो त्वचा, फेफड़े, यकृत के ऊतको व रक्त में उपस्थित होता है। हिस्टैमीन, α-एमीनो अम्ल हिस्टीडीन के विकार्बोक्सिलीकरण द्वारा उत्पन्न होता है।

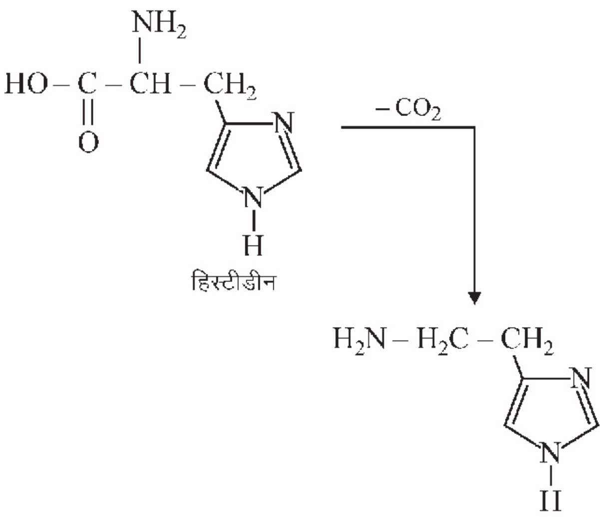

हिस्टीडीन → हिस्टैमीन

प्रतिएलर्जी औषधियाँ चूंकि हिस्टैमीन के विरूद्ध कार्य करती है अतः इन्हें प्रतिहिस्टैमीन भी कहते है। ये औषधियाँ शरीर पर दाने, खुजली, जलन, आंख आना (Conjuctivities) रिनिटिस (Rhinitis) (नाक के श्लेष्मा में सूजन), छींक, नाक बहना, आंख, नाक, गले में खुजली से आराम दिलाती है। इनका प्रयोग टेबलेट या विलयन के रूप में किया जाता है। कुछ प्रमुख प्रतिहिस्टामीन औषधियों के नाम व संरचनाएं निम्नानुसार है–

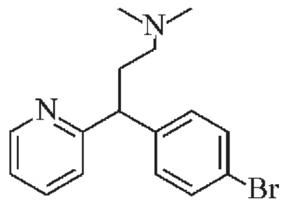

ब्रोमकेनिरामिन (डाइनेटेप)

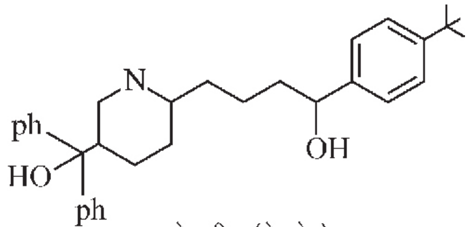

टरफेनाडीन (सेलडेन)

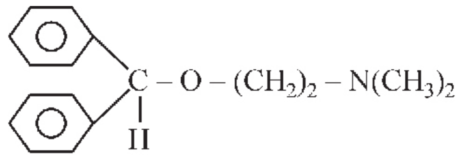

डाइफेनिल हाइड्रामीन

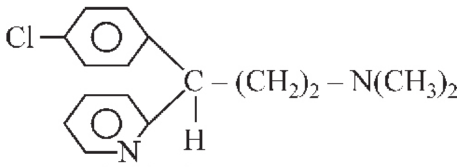

क्लोरफेनिरामिन

प्रतिहिस्टैमीन औषधियाँ लेने से कुछ विपरित पार्श्व प्रभाव भी उत्पन्न होते है जैसे अचेतना, नींद आना। अतः इन औषधियों का प्रयोग चिकित्सक की सलाह से नियंत्रित मात्रा में ही किया जाना चाहिये।

17.1.7 प्रतिनिषेचक औषधियाँ (Antifertility Drugs)

वे रसायन जो जनन–उत्पादकता को कम करने के लिए प्रयुक्त होते हैं प्रतिनिषेचक औषध कहलाते है।

बढ़ती हुई जनंसख्या से उत्पन्न समस्याओं के निवारण के उद्देश्य से इन रसायनों का विकास हुआ। जन्म दर को रोकने के लिए सर्वाधिक उपयोग में ली जाने वाली विधि है गर्भ निरोधक गोलियों का उपयोग। इन गोलियों में संश्लेषित हार्मोन एस्ट्रोजन तथा प्रोजेस्टेरॉन के व्युत्पन्न होते हैं। ये गोलियाँ महिलाओं में मासिक चक्र एवं अण्ड निर्माण को नियंत्रित करती है। नॉर एथिनड्रॉन संश्लिष्ट प्रोजेस्टेरोन व्युत्पन्न का उदाहरण है, जो जनन नियन्त्रण गोलियों में प्रयुक्त होता है।

एनाइनिलएस्ट्राडाइऑल (नोवएस्ट्रॉल) एक एस्ट्रोजन व्युत्पन्न है। जो प्रोजेस्टेरोन व्युत्पन्न के साथ जनन नियन्त्रण गोलियों में प्रयुक्त होता है।

ऐरोमेटिक हाइड्रोकार्बन के फ्लोरो व्युत्पन्नों का उपयोग प्रयोगशालाओं में प्रतिनिषेचक के रूप में किया जाता है। वनस्पति जैसे सोयाबीन, मटर का तेल, गाजर के बीज, बिनौले के तेल आदि में भी प्रतिनिषेचक रसायन पाये जाते है। उदाहरण के लिए मटर के तेल में मेटाजाइलो हाइड्रोक्विनॉन पाया जाता है।

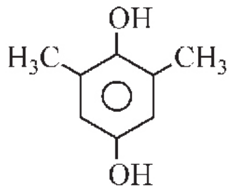

मेटाजाइलो हाइड्रोक्विनॉन

अन्य महत्त्वपूर्ण प्रतिनिषेचक रसायन है, रूटिन, शेटलेरिन, सिप्रोटीरोन, हेक्सा मेथिल फॉस्फेमाइड आदि।

गर्भनिरोधक गोलियों का उपयोग प्रतिनिषेचक रसायन ग्रहण करने की सबसे अधिक प्रयोग में ली जाने वाली विधि है किन्तु इन रसायनों का लंबा प्रयोग कुछ विपरित पार्श्व प्रभाव भी उत्पन्न करता है। जैसे–मासिक धर्म में अधिक रक्त स्त्राव बांझपन, वजन बढ़ना आदि।

17.1.8 प्रति अम्ल (Antacids)

वे रसायन जिनका उपयोग आमाशय की अम्लीयता को कम करने के लिए किया जाता है प्रति अम्ल औषधियां कहलाती है। बहुधा अधिक मात्रा में चाय, कॉफी, अचार, मुरब्बे, ऐलोपेथिक दवाओं के सेवन या अनियंत्रित रूप से खाद्य पदार्थों का सेवन करने से आमाशय में जठर रस में अतिरिक्त हाइड्रोक्लोरिक अम्ल स्त्रावित होने लगता है (अम्ल पित्त)। यदि P^H का स्तर आमाशय में अधिक गिर जाये तो पेट में अल्सर (व्रण) बनने लगता है जो प्राणघातक होता है। प्रति अम्ल वे लवण होते है जिनकी प्रकृति क्षारीय होती है जैसे–मिल्क ऑफ मैग्नीशिया (मैग्नीशियम हाइड्रॉक्साइड), मैग्नीशियम कार्बोनेट, मेग्निशियम ट्राइसिलिकेट, एल्युमिनियम हाइड्रॉक्साइड जैल, सोडियम बाइकार्बोनेट, एल्युमिनियम फॉस्फेट आदि। सोडियम हाइड्रोजन कार्बोनेट का अधिक प्रयोग करने से आमाशय में क्षारीयता बढ़ जाती है जो और अधिक अम्ल उत्पादन को उत्प्रेरित करती है। अतः उपरोक्त क्षारीय लवणों के स्थान पर दो महत्त्वपूर्ण प्रति अम्ल औषधियाँ डिजाइन की गई : सिमेटिडीन तथा रैनिटिडीन जो अतिअम्लता के उपचार में बहुत सहायक सिद्ध हुई। वर्तमान में ओमेप्रेजॉल और लैन्सोप्रेजॉल का संश्लेषण किया गया है जो अति अम्लता से शीघ्र राहत दिलाती है। ये औषधियाँ पेट में अम्ल बनने में रोकने में बेहद प्रभावी है। कुछ प्रमुख प्रति अम्ल औषधियों की संरचनाएं निम्न है–

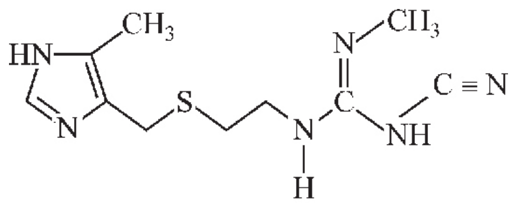

सिमेटिडीन

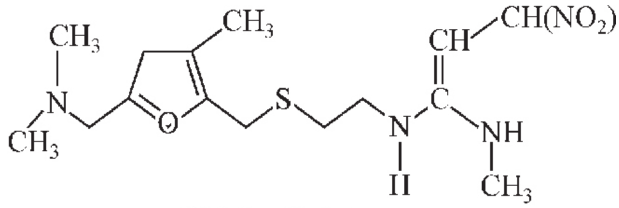

रैनिटिडीन (जिन्टैक)

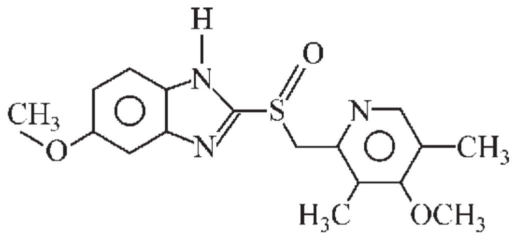

ओमेप्रेजॉल

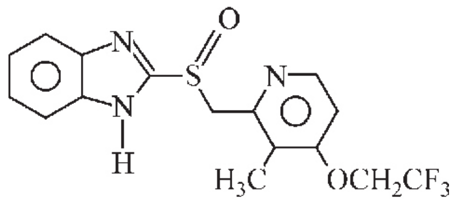

लैन्सोप्रेजॉल

17.2 रंजक (Dyes)

रंजक एवं वर्णक (Dyes and Pigments)

वे कार्बनिक यौगिक जो विभिन्न प्रकार के रंगों, खा़द्य पदार्थों, कागज, दिवारों एवं अन्य पदार्थो को रंगने के लिए प्रयुक्त किये जा सकते है रंजक कहलाते है। प्राचीन काल में रेशों या वस्तुओं को रंगने के लिए रंजको को पेड़, पौधों एवं जैविक पदार्थो से प्राप्त किये जाते थे। वर्णक एवं रंजक दोनो ही पदार्थो के उपयोग में कोई अन्तर नही है। दोनों में मुख्य अन्तर यह है कि रंजक वे पदार्थ होते है जो जल या अन्य विलायकों में विलेयशील होते हैं जबकि वर्णक उन पदार्थों को कहा जाता है जो जल अथवा अन्य विलायकों में अविलेय रहते

है। अर्थात् वर्णक स्कन्धित होकर रंजन कार्य करते है जो पदार्थो पर परत बना देते है। अन्य शब्दों में रंजक पदार्थों द्वारा विलयन से अवशोषित होकर रंजन करते है जबकि वर्णक पदार्थों पर परत बनाकर रंजन कार्य करते है। रंजक एवं वर्णक पदार्थों में कुछ मुख्य अन्तर निम्नालिखित है–

गुण	रंजक	वर्णक
1. विलेयता	बहुत से विलायकों में विलेयशील	जल एवं अधिकांश विलायकों में अविलेय
2. प्रकाश संवेदन	प्रकाश के सम्पर्क में रहने से फीके पड़ जाते है और रंग हल्का होने लगता है	ये अपेक्षाकृत प्रकाश से कम प्रभावित होते है।
3. संख्या	ये बहुत अधिक संख्या मे होते है और अनेक वर्गों में वर्गीकृत है	ये संख्या में कम होते है एवं वर्गीकृत भी नही है।
4. उत्पाद प्रतिरोध	ये वर्णकों की तुलना में कम प्रतिरोधी होते है जैसे विलायकों से बहुत प्रभावित होते है।	इनका प्रतिरोध बहुत उच्च होता है जैसे विलायकों से अप्रभावी रहते है।
5. रासायनिक संगठन	ये कार्बनिक यौगिक होते है।	ये सामान्यतः अकार्बनिक यौगिक होते है या भारी जहरीली धातुए होती है।
6. स्थिरता	ये बहुत अधिक स्थायी या स्थिर नही होते है	ये उच्च स्थायित्व प्रदर्शित करते है।
7. ज्वलन	ये ज्वलनशील होते है	ज्वलनशील नहीं होते है

रजकों के सामान्य लक्षण –

एक रंजक में निम्नांकित महत्वपूर्ण गुणधर्म होने चाहिए।

1. इनमें कोई विशेष रंग होना चाहिए।
2. इनमें कपड़े या रेशे को सीधे या परोक्ष रूप से रंगने की क्षमता होनी चाहिए।
3. ये प्रकाश से अप्रभावित रहने चाहिए।
4. ये जल, तनु अम्ल–क्षारों, ताप, शुष्क धुलाई में प्रयुक्त विलायकों, साबुन, अपमार्जकों इत्यादि के प्रति प्रतिरोधी होने चाहिए।

किसी पदार्थ का रंग उसमें उपस्थित रंजक पदार्थ तथा उस पर पड़ने वाले प्रकाश पर निर्भर करता है। जब श्वेत प्रकाश (400–750nm) किसी वस्तु पर आपतित होता है तो वह परावर्तित अथवा अवशोषित हो जाता है। आपतित प्रकाश के सम्पूर्ण भाग को परावर्तित कर देने पर वस्तु श्वेत रंग की दिखाई देती है जबकि सम्पूर्ण भाग को अवशोषित कर लेने पर वस्तु काली दिखाई देती है। यदि वस्तु आपतित प्रकाश के कुछ भाग को अवशोषित एवं कुछ भाग को परावर्तित कर देती है तो वह विशिष्ट रंग की दिखाई देती हे। दृश्य प्रकाश (400–750 nm) को मूलरूप में सात रंगो–बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी एवं लाल (बेनिआहपिनाला) से बना होता है जो तरंगदेर्ध्य के अनुसार इसी क्रम में विभाजित किये जा सकते है। बेंगनी से लाल की ओर जाने पर क्रमशः तरंगदेर्ध्य बढ़ती है जो 400nm से 750nm तक वितरित है। (अर्थात् 400×10^{-9} सेमी. से 750×10^{-9} सेमी तक)। परावर्तित प्रकाश का रंग अवशोषित प्रकाश का 'पूरक रंग' होता है उदाहरणार्थ कोई पदार्थ यदि हरा रंग अवशोषित करता है तो वह बैंगनी रंग का दिखाई देता है अर्थात् बैंगनी रंग हरे रंग का पूरक रंग है।

निम्न सारणी में बढ़ते तरंग दैर्ध्य के साथ–साथ अवशोषित रंग एवं उनके पूरक रंग प्रदर्शित किये गये है–

अवशोषित तरंग दैर्ध्य	अवशोषित रंग	दिखाई देने वाला या पूरक रंग
400–435 nm	बैंगनी	पीला–हरा
435–480 nm	नीला	पीला
480–490 nm	हरा–नीला	नारंगी
490–500 nm	नीला–हरा	लाल
500–560 nm	हरा	नील–लोहित
560–580 nm	पीला–हरा	बैंगनी
580–595 nm	पीला	नीला
595–605 nm	नारंगी	हरा–नीला
605–750 nm	लाल	नीला–हरा

दृश्य प्रकाश को अवशोषित करने वाले अर्थात् रंजक पदार्थो में लाखों यौगिक ज्ञात है परन्तु इनमें से लगभग 1500 रंजक यौगिक ही प्रायोगिक रूप से उपयोगी है एवं औद्योगिक स्तर पर संश्लेषित किये जा रहे है। प्रथम उपयोगी रंजक 1856 में सर्वप्रथम डब्लू.एच.पर्किन ने मात्र 18 वर्ष की आयु में संश्लेषित किया था। उसने अशुद्ध ऐनिलीन से एक बैंगनी रंजक बनाया था जिसमें मुख्यतः छ.फेनिल फीनोसेफ्रेनीन एवं उसके सजात थे।

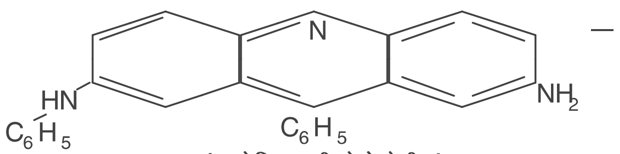

= (N-फेनिल फीनोसेफ्रेनीन)

रंजकों के संरचनात्मक लक्षण–

भौतिक एवं रासायनिक गुणों में समानता दर्शाने वाले कार्बनिक यौगिकों में रंग एवं रासायनिक संगठन के मध्य एक निश्चित सम्बन्ध होता है। उदाहरणार्थ–बैंजीन रंगहीन है जबकि इसका समावयवी फल्वीन रंगीन यौगिक है। ग्रेबी एवं लीबरमान ने रंग तथा रासायनिक संरचना के व्यवहार की सर्वप्रथम व्याख्या करने का प्रयास किया।

1876 में जर्मन रसायनज्ञ ओटोविट ने कार्बनिक पदार्थों में रंग एवं उनकी संरचना के मध्य सम्बन्ध बताने के लिए ''वर्ण मूलक–वर्ण वर्धक सिद्धान्त'' दिया जो 'विट सिद्धान्त' के नाम से जाना जाता है। इस सिद्धान्त के मुख्य बिन्दु निम्नानुसार है–

1. कार्बनिक यौगिकों में सामान्यतया रंग केवल तब ही पाया जाता है जबकि उनमें कोई असंतृप्त या बहुबन्ध उपस्थित हो। ऐसे समूहों को वर्णमूलक कहा जाता है जहॉ ये वर्ण (क्रोमा) एवं वर्धक (फोरस) अर्थात् क्रोमोफोर समूह कहलाते है। ग्रीक में क्रोमोफोर का तात्पर्य रंग धारण करने से है। ये क्रोमोफोर समूह रंग धारण करने के लिए उत्तरदायी होते है।

उदाहरणार्थ निम्न समूह वर्णकर्धक (क्रोमोफोर) समूह कहलाते है–

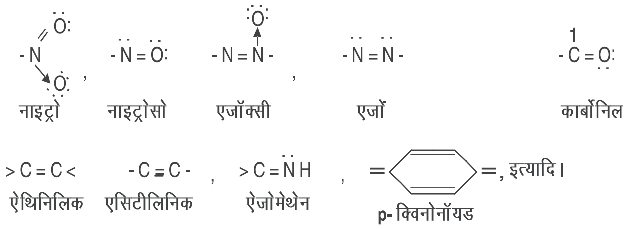

2. ऐसे यौगिक जिनमें वर्णमूलक समूह पाया जाता है वर्णजन (Chromogen) कहलाते है तथा किसी क्रोमोजन में क्रोमोफोर समूहों की संख्या जितनी अधिक होती है उनके रंग प्रदान करने की क्षमता भी उतनी ही अधिक हो जाती है। कुछ क्रोमोफोर (वर्ण मूलक) समूह जैसे – **-NO, -NO$_2$, -N = N-** इत्यादि स्वयं ही रंग प्रदान करने में सक्षम होते है। उदाहरणार्थ–

वर्णजन	वर्णमूलक	रंग
नाईट्रोबेन्जीन एजोबेन्जीन	$-NO_2$ - N = N -	पीला लाल

इसी प्रकार पॉलिईनों $C_6H_6 - (CH = CH)_n - C_6H_5$ में n के मान से रंग परिवर्तित हो जाते है। जैसे–

n = 0, 1, 2 (रंगहीन)
n = 3 (पीला)
n = 5 (नारंगी)
n = 7 (कॉपर ब्रॉज)
n = 11 (काला बैंगनी)

3. कुछ संतृप्त समूह ऐसे होते है जो अकेले यौगिक को रंग प्रदान करने में असमर्थ होते है परन्तु किसी किसी वर्ण मूलक समूह युक्त यौगिक में प्रविष्ट करवा दिये जाने पर यौगिक को रंग प्रदान करने योग्य बना देते है अथवा उसका रंग गहरा कर देते है। ऐसे समूह वर्ण वर्धक (Auxochromes) कहलाते है। उदाहरणार्थ–

$-\ddot{O}H$, $-\ddot{O}R$, $-\ddot{N}H_2$, $-\ddot{N}HR$, $-NR_2$ $-\ddot{X}:$, $-\ddot{S}H$, $\ddot{S}R$

इत्यादि वर्ण वर्धक समूह कहलाते है।

इसे निम्न उदाहरण में समझाया गया है। ऐजोबैंन्जीन एक रंगहीन यौगिक है परन्तु इसमें $-NH_2$ समूह प्रविष्ट कराने पर p- ऐमीनों एजोबेन्जीन प्राप्त होता है पीले रंग का रंजक है।

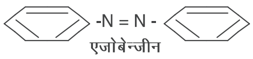

एजोबेन्जीन
(रंगहीन)

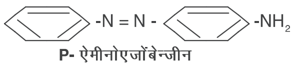

P- ऐमीनोएजोबेन्जीन
पीला रंजक

यहाँ -N = N - एवं वर्ण मूलक (क्रोमोफोर) समूह है जबकि $-NH_2$ एक वर्ण वर्धक (ऑक्सोक्रोम) समूह है।

आधुनिक सिद्धान्तों में संयोजकता बन्ध सिद्धान्त एवं अणुकक्षक सिद्धान्त के आधार पर रंजकों का संरचनात्मक सम्बन्ध और भी स्पष्टतः समझाया जा सकता है। ये सिद्धान्त आधुनिक क्वाटंम यांत्रिकी पर आधारित है जिनका अध्ययन आप उच्चत्तर कक्षाओं में कर सकेगें।

उपयोगिता के आधार पर रंजकों का वर्गीकरण :–

रंजकों का उपयोग कपड़े, रेशों, कागज, चमड़ा, दिवारें, खाद्य पदार्थो एवं अन्य अनेक पदार्थो को रंगने में किया जाता है। उपयोगिता के आधार पर रंजकों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया जा सकता है–

1. सीधे रंजक :– इन रंजकों के गरम जलीय विलयन में रेशों को सीधे डुबो दिया जाता है और फिर बाहर निकालकर सुखा दिया जाता है। ये सीधे ही उपयोग में लिये जाते है अतः इन्हें सीधे रंजक कहा जाता है। ये सूत, रेऑन, ऊन, रेशम, नाइलोन आदि के रंजन हेतु उपयोग में लिये जाते है। उदाहरणार्थ मार्टीयसपीला, कान्गों लाल इत्यादि।

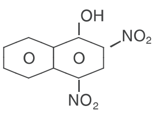

(मार्टीयस यलो)

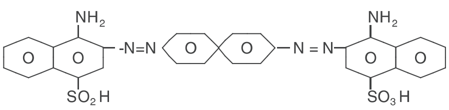

(कान्गो रेड)

2. अम्लीय रंजक – इनका प्रयोग हल्के अम्लीय माध्यम में किया जाता और ये सामान्यतया सल्फोनिक अम्ल या उनके लवण होते है। ये ऊन, रेशम, नाइलोन के रंजन में उपयोगी है परन्तु सूत पर प्रभावी नही होते है। उदाहरणार्थ नारंगी–I इसी श्रेणी का रंजक है।

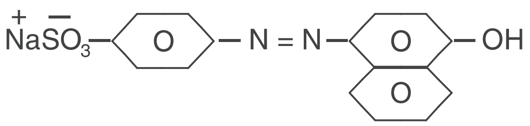

नारंगी–I

3. क्षारीय रंजक – इन रंजकों में क्षारीय एमीनों समूह उपस्थित होते है जो अम्ल में विलेयशील लवण बनाते है। इस प्रकार बने हुए धनायन भाग कपड़े के ऋणावेशित भाग के साथ जुड़कर रंजन कार्य करते है। नाइलोन, पॉलिएस्टर आदि का रंजन इनसे किया जाता है। उदाहरणार्थ एनिलीन यलो, मैलाकाइट ग्रीन आदि।

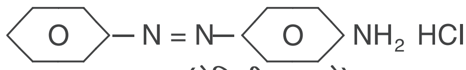

(ऐनिलीन यलो)

4. प्रकीर्णन रंजक – इन रंजकों में निलम्बन से रंजक के सूक्ष्म कण कपड़े पर विसरित (या प्रकीर्णित) होकर फेल जाते है। इस प्रकार के रंजक पॉलिएस्टर, नाइलॉन, पॉलीएक्रिलोनाइट्रायल इत्यादि रेशों के रंजन में प्रयुक्त होते है। उदाहरणार्थ ऐन्थ्रोक्विनोन रंजक।

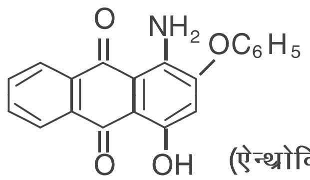

(ऐन्थ्रोक्विनॉन रजंक)

5. रेशा–क्रियाशील रजंक– ये रजंक, सूत, रेशम व ऊन जैसे रेशों के हाइड्रॉक्सी अथवा ऐमीनों समूह के साथ स्थायी रासायनिक बन्ध बना लेते है जिससे ये अनुत्क्रमणीय, स्थायी एवं पक्के रंग बना लेती है। उदाहरणार्थ प्रोशन लाल।

6. अन्तर्निहित रंजक – अन्तर्निहित रंजक विलयन में अभिक्रिया द्वारा रंजन प्रक्रम के समय ही संश्लेषित किये जाते है। कपड़े या रेशें को एक क्रियाकारक विलयन में डुबोकर दूसरे क्रियाकारक विलयन में डुबोया जाता है जहाँ विलयन में ही रंजक संश्लेषित होकर कपड़े या रेशे के साथ बन्ध जाते है। ये रंजक सामान्यतः पक्के नही होते है। उदाहरणार्थ फीनॉल या नैफ्थॉल विलयन के साथ भीगे हुए रेशों को यदि डाइऐजोनियम लवण के विलयन में डालते है तो रेशों की सतह पर युग्मन अभिक्रिया सम्पन्न हो जाते है और अविलेय ऐजो रंजक रेशों की सतह पर अधिशोषित हो जाते है। सूत, रेशम, पॉलिस्टर, नाइलोन इत्यादि का रंजन इस विधि से किया जाता है। ऐसे रंजकों को 'बर्फ रंग' भी कहते है क्योंकि ये अभिक्रिया कम ताप पर सम्पन्न होती है।

7. वेट रंजक – ये सम्भवतः प्राचीनत्तम ज्ञात रंजक है। इनमें अविलेयशील रंजक को पहले उसके विलयशील रंगहीन रूप में बदलकर रेशों को भिगोया जाता है। अब उसे वायु में सुखाया जाता है जिससे उसका ऑक्सीकरण हो जाता है। रंगहीन विलयशील रूप ऑक्सीकृत होकर रंगीन अविलेयशील

रूप में आ जाता है। उदाहरणार्थ इंडिगो रंजक इसी प्रकार का रंजक है। ये रंजक मुख्य रूप से सूती कपड़ों या रेशों के लिए उपयुक्त होते है।

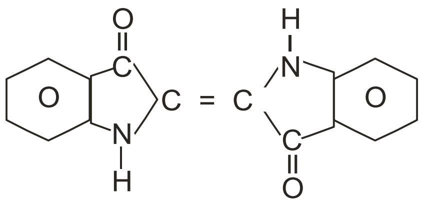

इण्डिगो नीला
(जल में अविलेय)

ऑक्सीकरण ↑ ↓ अपचयन

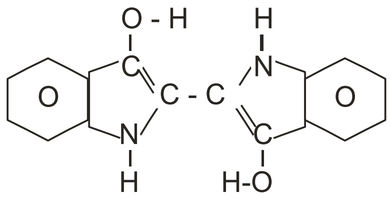

इण्डिगो रंगहीन
(जल में विलेय)

8. मोर्डेन्ट रंजक – रंग बन्धक या मॉर्डेन्ट रंजक मुख्यतः ऊनी वस्त्रों के रंजन में प्रयुक्त किये जाते है। इनमें पहले कपड़े को किसी निश्चित धातु आयन के विलयन में डुबोया जाता है उसके बाद रंजक विलयन में डुबोते है जिससे धातु आयन एवं रंजक के मध्य उपसहसंयोजक बन्ध बन जाता है। इस प्रकार रंजक रेशों पर बन्धन द्वारा जुड़ जाते हैं। इस प्रकार के रंजकों की महत्वूपर्ण विशेषता यह होती है कि एक ही रंजक भिन्न–भिन्न धातु आयनों के साथ भिन्न–भिन्न रंग प्रदान करता है। उदाहरणार्थ ऐलिजरीन रंजक ऐल्युमिनियम आयनों के साथ गुलाबी रंग देता है जबकि बेरीयम आयनों के साथ नीला रंग प्रदान करता है।

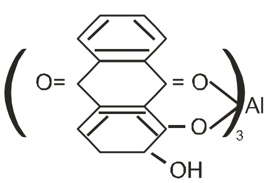

एलिजरीन–**Al** रंजक (गुलाबी)

सरंचना के आधार पर रंजकों का वर्गीकरण – रासायनिक दृष्टि से उपयोगिता के स्थान पर रजंक की संरचना के आधार पर वर्गीकरण अधिक उचित है जिससे रजंन प्रणाली एवं और भी नये रंजकों के संश्लेषण का मार्ग प्रशस्त होता है। संरचना के आधार पर रंजकों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया जा सकता है–

1. नाइट्रो एवं नाइट्रोसों रंजक– ये सर्वाधिक प्राचीन ज्ञात रंजक है जिनमें नाइट्रो या नाइट्रोसों समूह उपस्थित होते है। उदाहरणार्थ पिक्रीक अम्ल, पक्का हरा–O इत्यादि।

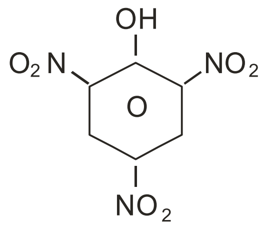

(पिक्रीक अम्ल)

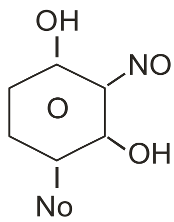

(पक्का हरा–O)

2. डाइफेनिलमेथेन रजंक – इन रंजकों में मुख्य ढ़ाचा डाइफेनिलमेथेन होता है। उदाहरर्णाथ ऑरैमीन– O इसी श्रेणी एक महत्वपूर्ण रजंक है जो रेशम, ऊन, जूट, कागज तथा चमड़े इत्यादि को रंगने में प्रयुक्त होता है।

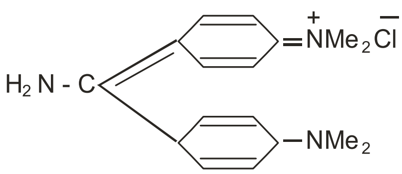

(ऑरैमीन–O)

3. ट्राइफेनिलमेथेन रजंक – ये रजंक ट्राइफेनिल मेथेन के ऐमीनों व्युत्पन्न है। इस वर्ग के अनेक रंजक आते है उदाहरणस्वरूप मेलेकाइट हरा एक बहुत उपयोगी रंजक है जो ऊन तथा रेशम को सीधा रंगता है और सूती कपड़े को रंगने के लिए टेनिन से मॉर्डेन्ट करके रंगा जा सकता है।

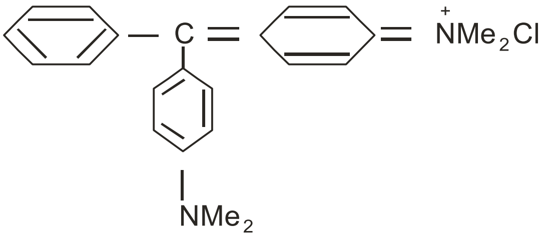

(मैलेकाइट हरा)

4. थेलीन एवं जेन्थेन रंजक– थेलिक एनहाइड्राइड तथा फीनॉलिक यौगिकों के संघनन से बने यौगिक थैलीन कहलाते है। इसी श्रेणी में जैन्थीन वलय तंत्र को भी लिया जा सकता है। उदाहरणार्थ फिनोफ्थैलीन में थैलीन वलय तंत्र होता है एवं फ्लुओरेसीन एक जैन्थीन व्युत्पन्न है।

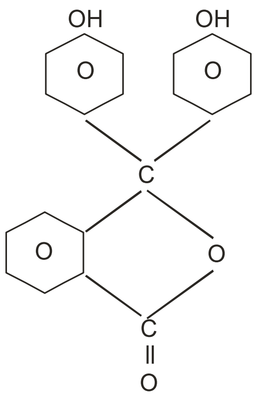

(फिनोफ्थैलीन)

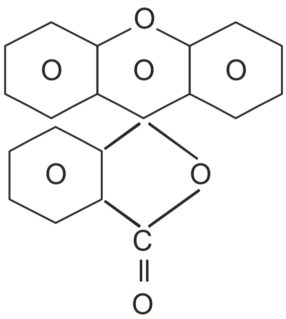

(फ्लुओरेसीन)

5. रेजो रंजक – संश्लेषित रंजकों का यह सबसे बड़ा समूह जिसमें लगभग सभी रंग आ जाते है इन रंजक यौगिकों में वर्ण मूलक समूह ऐजो (- N = N –) समूह होता है जबकि वर्ण वर्धकों के रूप में - NH_2 , - NHR , - NR_2 , - OH इत्यादि होते हैं। लगभग सभी ऐजों रजंक पक्के रंग होते है। उदाहरणार्थ मेथिल ऑरेन्ज, ऐनिलीन यलो, सूडान–I इत्यादि।

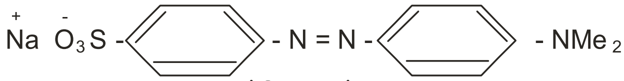

(मेथिल ऑरेन्ज)

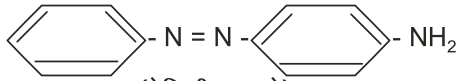

(ऐनिलीन यलो)

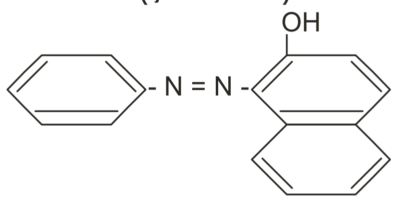

(सूडान–I)

6. इण्डिगो रंजक– सबसे पुराना कार्बनिक रंजक इण्डिगो या नील है। ब्रिटीस काल में 1906 में बंगाल के विभाजन का एक बडा कारण यही रंजक बना जहॉ किसानों ने नील की खेती न करने का आन्दोलन किया था। पोधे का नाम इण्डिगोफेरा है जिससे इसे प्राप्त किया गया है।

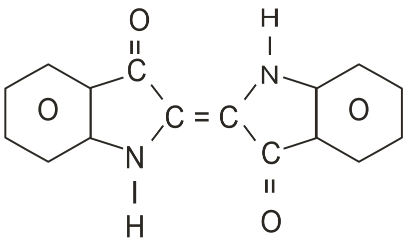

7. एन्थ्रोक्विनोन रजंक – इनमें एन्थ्रोक्विनोन नाभिक होता है और इस वर्ग में सर्वाधिक महत्वपूर्ण सदस्य ऐलिजरीन है जिसे मजीठ की जड़ों से प्राप्त किया गया है। इस रंजक का उपयोग मोर्डेन्ट रंजक के रूप में किया जाता है जिसमें भिन्न–भिन्न धातु आयनों के साथ यह भिन्न रंग प्रदान करता है।

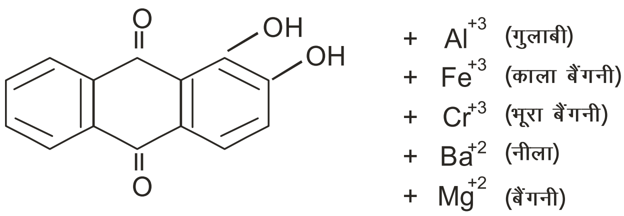

8. विषम चक्रीय रंजक – इन रंजको के अणुओं में कम से कम एक विषम चक्रीय वलय उपस्थित होती है। यह भी एक बहुत बड़ा समूह है और नये–नये रंजकों का निर्माण इस श्रृंखला में जारी है। उदाहरणार्थ एक्रीफ्लेविन रंजक जिसका कैलिकों प्रिटिंग, रंजन, कीटनाशी, चिकित्सा इत्यादि में उपयोग होता है।

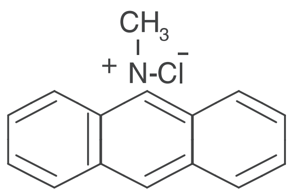

(एक्रिफ्लेविन)

17.3 खाद्य पदार्थों में रसायन (Chemicals in food)

खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखने, आकर्षण एवं रंगीन बनाने एवं मिठास बढ़ाने में मिश्रित विशिष्ट रसायनों का उपयोग निम्न है–

1. परिरक्षक– खाद्य पदार्थों को नष्ट होने तथा सड़ने से बचाने के लिए उपयोग में लाई जाने वाली विभिन्न तकनीक जिनसे खाद्य पदार्थों का अधिक समय तक उपयोग किया जा सके खाद्य परिरक्षण कहलाती है।

अतः वे रासायनिक पदार्थ जो खाद्य पदार्थों में जीवाणुओं आदि के कारण होने वाले अवांछित परिवर्तनों को रोकने तथा उन्हें नष्ट होने से बचाने के लिए प्रयुक्त किए जाते है, परिरक्षक कहलाते है।

किसी रासायनिक परिरक्षक में निम्नांकित गुणों का होना आवश्यक है।

(i) अल्प मात्रा में क्रियाशील हो।

(ii) दीर्घकालिक प्रभावी हो।

(iii) भोज्य पदार्थ की गुणवत्ता कम न करे।

(iv) भोज्य पदार्थ पर हानिकारक प्रभाव न हो।

निम्नांकित रसायन परिरक्षक के रूप में काम आते है।

(i) सोडियम बेंजोएट– यह सर्वाधिक प्रयुक्त परिरक्षक है। इसका 0.06% से 0.1% सान्द्रता वाला विलयन फलों के रस, स्कवैश, जैम, जैली, अचार आदि के परिरक्षण में प्रयुक्त होता है।

(ii) सार्बेट– ये सार्बिक अम्ल के लवण होते है। इनका प्रयोग दूध एवं पनीर से बनी खाद्य सामग्री को परिरक्षित करने में किया जाता है।

(iii) पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट– भोज्य पदार्थों में पोटेशियम मेटाबाइ सल्फाइट मिलाने पर सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2) प्राप्त होती है जो भोजन को परिरक्षित रखने में सहायक है।

$$K_2S_2O_5 \longrightarrow K_2SO_3 + SO_2$$

(iv) पेराबीन्स– ये एल्किल पैराहाइड्रोक्सी बैंजोएट है। इनका प्रयोग टमाटर की चटनी, सॉस के परिरक्षण में किया जाता है।

(v) प्रोपिओनेट– ये प्रोपिओनिक अम्ल के एथिल व फेनिल एस्टर होते है। इनका प्रयोग पापड़, बेकरी बिस्किट आदि को सुरक्षित रखने में किया जाता है।

17.3.2 कृत्रिम मधुरण कर्मक (Artificial sweeteners)–

कार्बनिक रासायनिक यौगिक जो खाद्य पदार्थों को मीठा बनाने के लिए प्रयुक्त होते है कृत्रिम मधुरण कर्मक कहलाते है।

(i) सैकेरीन– O-सल्फो बैंजोइक एमाइड को सैकेरीन कहते है। यह जल में अविलेय परन्तु इसका सोडियम लवण जल में विलेय होता है। यह शर्करा से 600 गुना अधिक मीठी होती है। मधुमेह रोगी शर्करा के स्थान पर सैकेरीन का प्रयोग करते है क्योंकि यह मानव शरीर द्वारा अवशोषित नहीं होती है। इसकी संरचना निम्नांकित होती है–

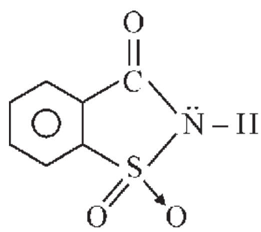

O-सल्फो बैंजोइक एमाइड
(जल अविलेय)

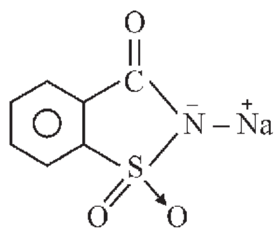

सैकेरीन का सोडियम लवण
(जल विलेय)

व्यापारिक रूप से उपलब्ध महत्त्वपूर्ण कृत्रिम मधुरण कर्मक सारणी में दिए गए है।

नाम	संरचना सूत्र	सूक्रोस की तुलना में माधुर्य मान
सैकरीन	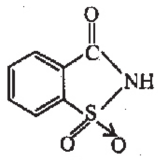	600
ऐस्पार्टेम	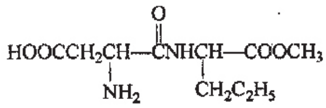	100
ऐलिटैम	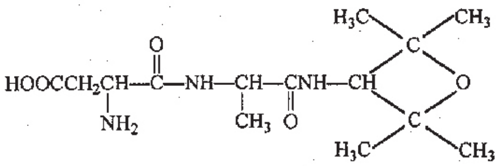	2000
सुक्रोलोस	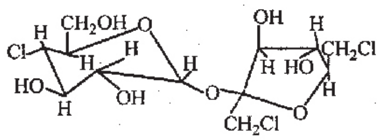	600

3. **प्रति ऑक्सीकारक** – खाद्य पदार्थ में ऑक्सीजन की क्रिया के वेग को कम करने हेतु मिश्रित रासायनिक पदार्थ प्रति ऑक्सीकारक कहलाते है। ये ऑक्सीजन के प्रति अधिक क्रियाशील होते है और स्वयं को नष्ट करके खाद्य पदार्थ को सड़ने से बचाते है। इनकी सरंचनाएं निम्न होती है–

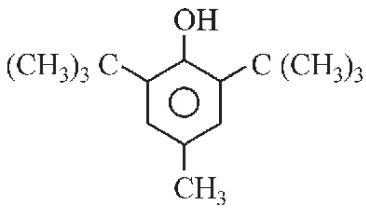

2,6–डाई तृतीयक ब्युटिल हाइड्रॉक्सी टालुइन (BHT)

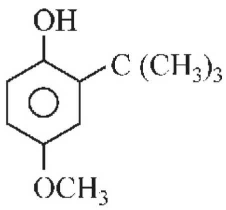

2–तृतीयक ब्युटिल हाइड्रॉक्सी ऐनीसॉल (BHA)

17.3.4 खाद्यरंग (Food colour)–

खाद्य पदार्थों को आकर्षक एवं रंगीन बनाने के लिए प्रयुक्त रसायन खाद्य रंग कहलाते है। खाद्य रंग मुख्यतः रंजक होते है।

उदाहरण :

(i) **टेट्राजिन–** यह पीले रंग का होता है।

(ii) **1, 4–डाई–P-टोलुडिनो ऐन्थ्राक्विनोन–** यह हरे रंग का होता है।

सामान्यतः खाद्य रंग बच्चों तथा अस्थमा के रोगियों के लिए हानिकारक होता है।

17.4 अपमार्जक

साबुन –

उच्च वसा अम्लों जैसे स्टीयरिक अम्ल, पामिटिक अम्ल, ओलिइक अम्ल इत्यादि के सोडियम या पोटेशियम लवणों को साबुन कहा जाता है। संतृप्त वसा अम्लों के सोडियम लवण कठोर साबुन कहलाते है जबकि असंतृप्त वसा अम्लों के पोटिशियम लवण सामान्यतया मृदु साबुन कहलाते है। साबुनों के निर्माण में वया सा तेलों का क्षारीय जल–अपघटन कराया जाता है। वया या तेल लम्बी श्रृंखला युक्त कार्बोक्सिलिक अम्लों एवं ग्लिसरॉल से निर्मित ट्राइएस्टर होते है। साबुन निर्माण की प्रक्रिया को साबुनीकरण कहते है। हमारे देश में नारियल, मूंगफली, तिल सोयाबीन, महुआ इत्यादि से निकाले गये तेलों अथवा इनके उत्प्रेरकीय हाइड्रोजनीकरण से प्राप्त किये गये वसाओं से साबुनों को प्राप्त किया जाता है। अनेक देशों में जान्तव वसा का उपयोग भी साबुन बनाने में किया जाता है। तेल एवं वयासें लगभग समान संरचनायुक्त होती है परन्तु तेलों में कार्बनिक श्रृंखलाओं में कुछ असंतृत बन्ध भी होते है जबकि

वसाओं में सभी श्रृंखलाएँ संतृप्त होती है। इस कारण वसाओं में वाण्डरवाल बल अपेक्षाकृत प्रबल हो जाते है और यही कारण है कि कमरे के ताप वसा ठोस अवस्था में होती है जबकि तेल द्रव अवस्था में होते है। उदाहरणार्थ–

$$\begin{array}{l} CH_2\text{-O-CO-}(CH_2)_{16}\text{-}CH_3 \\ |\\ CH\text{-O-CO-}(CH_2)_{16}\text{-}CH_3 \\ | \\ CH_2\text{-O-CO-}(CH_2)_{16}\text{-}CH_3 \end{array}$$

ग्लिसरॉल ट्राइस्टीयरेट (वसा)

$$\begin{array}{l} CH\text{-O-CO-}(CH_2)_7\text{-}CH=CH\text{-}(CH_2)_7\text{-}CH_3 \\ | \\ CH\text{-O-CO-}(CH_2)_7\text{-}CH=CH\text{-}(CH_2)_7\text{-}CH_3 \\ | \\ CH\text{-O-CO-}(CH_2)_7\text{-}CH=CH\text{-}(CH_2)_7\text{-}CH_3 \end{array}$$

ग्लिसरॉल ट्राइऑलिएट (तैल)

एक साबुनीकरण अभिक्रिया को निम्न प्रकार दिया जा सकता है–

$$\begin{array}{l} CH\text{-O-COR} \\ | \\ CH\text{-O-COR} \\ | \\ CH\text{-O-COR} \end{array} \xrightarrow[100-120^{\circ}C]{+3NaOH} \begin{array}{l} CH_2\text{-OH} \\ | \\ CH\text{-OH} \\ | \\ CH_2\text{-OH} \end{array} + 3R\text{-}\overset{\displaystyle O}{\overset{\|}{C}}\text{-}\overset{-}{O}\overset{+}{Na}$$

ग्लिसरॉल **(साबुन)**

स्पष्ट है कि एक मोल वसा या तेल एवं तीन मोल NaOH (कास्टिक सोड़ा) की क्रिया से एक मोल ग्लिरीन एवं तीन मोल साबुन प्राप्त होता है। साबुन एवं ग्लिसरीन का मिश्रण प्राप्त होता है जिसे 'लाई' कहते है। लाई को स्थिर छौड़ने पर साबुन नीचे बैठ जाता है एवं ग्लिसरीन निथरकर ऊपर आ जाता है जिसे अलग कर लिया जाता है। अब साबुन को NaCl के संतृप्त विलयन के साथ हिलाया जाता है जहाँ सोडियम समआयन प्रभाव से साबुन का अवक्षेपण कर लिया जाता है। इसके बाद रंग गंध इत्यादि से साबुन का निखार किया जाता है।

साबुन की अपमार्जन क्रिया–

साबुन के एक अणु दो भागों से मिलकर बना होता है–

1. लम्बी हाइड्रोकार्बन श्रृंखला जो अध्रुवीय होती है और पूंछ कहलाती है।
2. लवण के समान ध्रुवीय शीर्ष जो जल में विलेय होता है।

जैसे सोडियम स्टीयरेट में $(C_{17}H_{35}CO\overset{-}{O}\overset{+}{Na})$

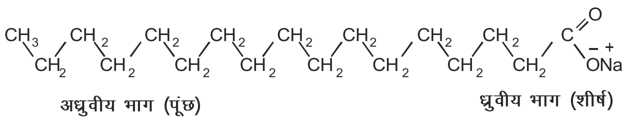

जब साबुन के विलयन में किसी गन्धे कपड़े या विलयन को डाला जाता है तो साबुन के अणु गोलाकार रूप में एकत्रित होकर मिसेल बनाते है। इसमें अध्रुवीय भाग तेलीय अशुद्धि या ग्रीस की ओर होता तथा ध्रुवीय भाग जल में विलेय रहता है।

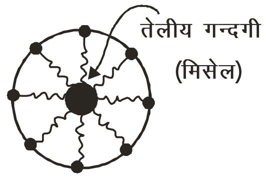

कपड़े को रगड़ने या जल के साथ खंगालने पर ये मिसेल कपड़े की सतह से छूट जाते है और प्रक्रिया को दो तीन बार दौहराने पर सारे मिसेल छुटकर अलग हो जाते है और कपड़ा स्वच्छ हो जाता है। समान आयन निकट आने के कारण ये मिसेल एक दूसरे को सदैव प्रतिकर्षित करते है। यह साबुन अपमार्जन की क्रिया है।

अपमार्जक (Detergents)–

लम्बी श्रृंखला वाले हाइड्रोकार्बन तथा सल्फ्यूरिक अम्ल या सल्फोनिक अम्लों के व्युत्पन्न अपमार्जक कहलाते है। 1920 में सर्वप्रथम इनका प्रयोग आरम्भ हुआ था और इन्हें "साबुनविहिन साबुन" कहा जाने लगा क्योंकि ये साबुन नही है परन्तु साबुन का ही कार्य करते है।

वास्तव में ये अपमार्जक लम्बी हाइड्रोकार्बन श्रृंखला युक्त सलफ्यूरिक अम्ल या सल्फोनिक अम्ल के सोडियम लवण होते है उदाहरणार्थ

$$CH_3\text{-}(CH_2)_{10}CH_2\text{-O-}SO_2\text{-}\overset{-}{O}\overset{+}{Na}$$

सोडियम डोडेकाइल सल्फोनेट या सोडियम लॉरिल सल्फेट
(व्यापारिक नाम – ड्रेफ्ट)

इसी प्रकार

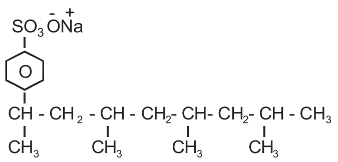

सोडियम P-(1, 3, 5, 7) – टेड्रा मेथिल ऑक्टिल बेन्जीन सल्फोनेट
(व्यापारिक नाम–नेकॉलोन या सैण्डामर्स)

उपर्युक्त प्रकार के अणुओं का एक सिरा आयनिक होता है (जल स्नेही) जो सिर या शीर्ष कहलाता है जबकि शेष भाग एक लम्बी हाइड्रोकार्बन श्रृंखला है (जल विरोधी) जो अध्रुवीय होती है। जल विरोधी भाग पूंछ कहलाता है जो चिकनाई एवं तैलीय अशुद्धियों में विलेयशील होती है स्पष्ट है कि इनकी संरचना भी साबुन की भांति ही होती है।

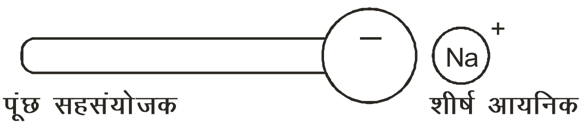

इनकी कार्य प्रणाली भी साबुन की भांति ही होती है। आयनिक अशुद्धियों को जल स्नेही भाग घुलकर हटाता है जबकि तैलीय अशुद्धियों को जल विरोधी भाग घुलकर अलग कर देता है। हाथ से रगड़ने या मशीन में हिलाने से ये गन्दगी को छोटी–छोटी बून्दों के रूप में हटाकर कपड़े को साफ कर देते है।

साबुन एवं अपमार्जन में अन्तर –

साबुन एवं अपमार्जक दोनों ही एक ही उपयोग में लिये जाते है जो अपमार्जन क्रिया कहलाती है परन्तु साबुनों की तुलना में अपमार्जकों का उपयोग अधिक सुविधाजनक होता है। इसमें मुख्य अन्तर निम्नानुसार है–

1. साबुन दुर्बल अम्ल (जैसे स्टीयेरिक अम्ल) एवं प्रबल क्षार (जैसे NaOH) से मिलकर बने लवण है अतः ये जल अपघटन कर देते है और इनका विलयन क्षारीय प्रकृति का होता है। साबुन में–

$$R\text{-}COO^{-}Na^{+} + H_2O \rightleftharpoons R\text{-}COOH + Na^{+} + OH^{-}$$

(साबुन–एक लवण) (अन आयनित) (आयनित)

(क्षारीय विलयन)

जबकि अपमार्जक में

$$Ar\text{-}SO_2\bar{O}\,\overset{+}{Na} + H\ O \rightleftharpoons Ar\text{-}SO_2\text{-}OH + NaOH$$

(प्रबल अम्ल) (प्रबल क्षार)

उदासीन विलयन

इसके विपरीत अपमार्जक प्रबल अम्ल एवं प्रबल क्षार से बनते है अतः इनका जल अपघटन नही होता है और इनका विलयन उदासीन होता है। इस प्रकार साबुन क्षारीय होते है जिससे कपड़े को अधिक मात्रा में जल के साथ खंगालते है तब कपड़े साफ होते है जबकि अपमार्जक एक या दो बार खंगालने पर ही कपड़े से मुक्त हो जाते है। इसके अतिरिक्त कपड़े के रंग एवं रेशें भी साबुन से खराब हो जाते है जबकि अपमार्जक उदासीन होने से रंग व रेशें खराब नही करते है।

2. कठोर जल में Mg^{+2} , Ca^{+2} , Fe^{+2} , Fe^{+3} इत्यादि आयन उपस्थित होते है जो साबुनों के साथ क्रिया कर अघुलनशील लवणों के रूप में अवपेक्षित हो जाते है इस प्रकार साबुन व्यर्थ हो जाते और कपड़े का मैल सफ नही कर पाते। इसके साथ ही ये अवक्षेप कपड़े पर चिपक जाते है।

$$2R\text{-}COO^{-}Na^{+} + Ca^{+2} \xrightarrow{H_2O} (R\text{-}COO)_2Ca + 2Na^{+}$$

अतः कठोर जल के साथ साबुन का प्रयोग नही किया जा सकता। इसके विपरीत अपमार्जक कठोर एवं मृदु जल में समान रूप से प्रयोग में लिये जा सकते है क्योंकि इसके अम्लीय एवं क्षारीय दोनों भाग प्रबल होते है अतः ये कोई अघुलनशील लवण नही बनाते है।

3. अपमार्जकों की सहायता से कठोर जल को मृदु बनाया जा सकता है जो साबुनों में यह गुण नही है। यदि अपमार्जकों को पॉलीफास्फेटों के साथ मिलाया जाता है तो ये आयनों के साथ जटिल यौगिक बनाकर नीचे बैठ जाते है और मृदु जल प्राप्त हो जाता है।

4. अपमार्जकों का उपयोग स्नेहकों के साथ भी किया जा सकता है जबकि साबुनों के साथ नही किया जा सकता।

अपमार्जकों के प्रकार – अपमार्जक तीन प्रकार के होते है जहॉ इनकी उपयोगिताएँ भी भिन्न–भिन्न हो सकती है।

1. ऋणायनी अपमार्जक – इस श्रेणी में ऐल्फिल अथवा ऐरिल सल्फेट के सोडियम लवणों को लिया जाता है जो सर्वाधिक चलन में है। स्पष्ट है कि इसके शीर्ष भाग पर ऋणावेश उपस्थित होता है। सोडियम लॉटिल सल्फेट एवं सोडियम P-– डोडेसिल बेन्जीन सल्फोनेट इसी श्रेणी के अपमार्जक है।

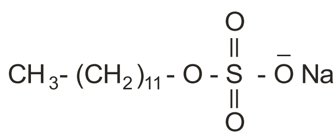

सोडियम लॉरिल सल्फेट

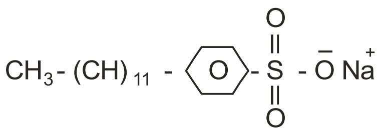

(सोडियम p-n-डोडेसिल–बेन्जील सल्फोनेट)

2. धनायनी अपमार्जक – इन अपमाजकों की अपमार्जन क्रिया तो समान ही होती है, केवल इनमें अपमार्जन करने वाला आयन धनायन होता है। ये सामान्यतः चतुष्क अमोनियम श्रवण होते है। उदाहरणार्थ–

$$R-(CH_2)_n-\overset{+}{N}(CH_3)_3\overset{-}{Cl}$$

3. अन–आयनिक अपमार्जक – ये अत्याधुनिक अपमार्जक होते है जो उदासीन अणु युक्त होते है। इनमें अपमार्जन क्रिया के लिए आवश्यक जल–स्नेही सिरा किसी आवेश द्वारा आवेशित होने के स्थान पर इस प्रकार का बहुक्रियात्मक समूह होता है जो हाइड्रोजन बनधन द्वारा जल में विलेय हो जाता है। उदाहरणार्थ–

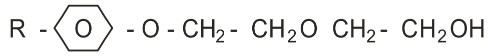

इसी प्रकार पॉली हाइड्रोक्सी एल्कोहॉलों के एस्टर भी अपमार्जक की भांति व्यवहार कर सकते है उदाहरणार्थ,

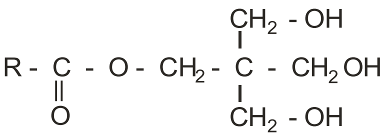

(पेन्टा ऐरिथ्रिटॉल मोनो एल्केनॉएट)

17.5 कीट प्रतिकर्षी

वे रासायनिक पदार्थ, जो कीट–पतंगों को मारने, भगाने अथवा इच्छित स्थान से हटाने के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं, कीट प्रतिकर्षी कहलाते हैं। अधिकांश कीट प्रतिकर्षी वायु में मिलकर कीट–पतंगों के श्वसन तन्त्र को करते हैं।

कीट प्रतिकर्षी ठोस, द्रव तथा सधूमकारक तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किये जा सकते हैं। कुछ प्राकृतिक कीट प्रतिकर्षी नीम की पत्ती, तम्बाक की पत्ती, सल्फर आदि को आग में रखकर धूनी देने से घरों अथवा फसलों से कीट–पतंगे भाग जाते है।

अनेक द्रव कीट प्रतिकर्षी व्यापारिक नामों से बेचे जाते है। जिनमें फिनिट, बेगांन, ऐन्डोसल्फॉन, फीनाकॉल, फिनाइल इत्यादि को घरों एवं खेतों में कीट प्रतिकर्षी के रूप में प्रयोग किया जाता है। उपर्युक्त संश्लेषित कीट प्रतिकर्षों कुछ लाभदायक कीट–पतंगों, पक्षियों के साथ–साथ मनुष्यों के लियें भी हानिकारक होते हैं अतः हर्बल (प्राकृतिक) उत्पाद कीट प्रतिकर्षियों जैसे नैफ्थेलीन की गोलियाँ, ओडोनिल, ओडोमॉस आदि को घरेलू कीट प्रतिकर्षों के रूप में प्रयोग किया जाना अधिक उपयोगी है।

17.5.1 फीरोमोन–लैंगिक आकर्षी

वे रासायनिक पदार्थ, जो किसी जन्तु द्वारा उत्सर्जित होते हैं तथा अन्य जन्तुओं के व्यवहार को प्रभावित करते हैं, फीरोमोन कहलाते हैं। फीरोमोन में एक विशेष प्रकार की गन्ध होती है जिसके आधार पर उस जन्तु की पहचान हो सकती है। फीरोमोन कई प्रकार के होते हैं जैसे लैंगिक, अनुगामी, संकेतक, आदि। फीरोमोन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य लैंगिक आकर्षों के रूप में है। लैंगिक आकर्षों फीरोमोन प्रजनन काल में मुख्यतः मादा द्वारा उत्सर्जित किये जाते हैं जिससे नर उनकी ओर आकर्षित होते हैं। लेकिन कस्तूरी मृग (Musk deer) में नर की नाभि में कस्तूरी (Musk) का उत्सर्जन होता है जिससे मादा आकर्षित होती है। इसमें मस्कोन होता है। चीते, बिल्ली इत्यादि द्वारा उत्सर्जित फीरोमोन में सिवेटोन होता है। इनकी तथा अन्य फीरोमीन की संरचनाएं निम्न हैं –

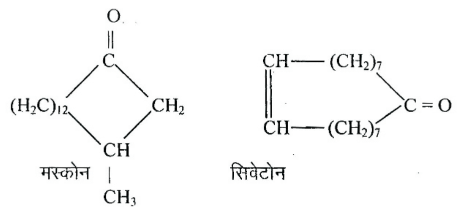

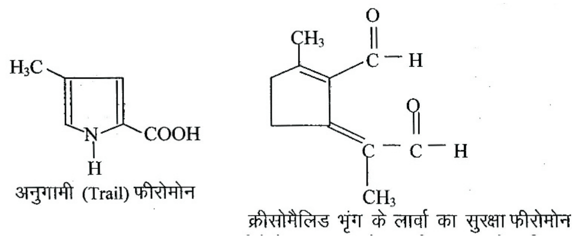

लैंगिक आकर्षों फीरोमोन का उपयोग हानिकारक कीट नियंत्रण में किया जा सकता है। फीरोमोन की गन्ध अत्यन्त तीव्र होती है अतः इसकी थोड़ी सी मात्रा को ही जन्तु अधिक दूरी से पहचान लेते हैं। यदि किसी कीट विशेष के लैंगिक आकर्षों फीरोमोन की थोड़ी सी मात्रा को एक स्थान पर रख दिया जाये तो उसका विपरीत लिंगी कीट उस स्थान पर एकत्रित हो जायेगें जिन्हें मारा जा सकता है या बन्ध्याकरण (Sterilized) किया जा सकता है। इससे प्रजनन की दर कम हो जायेगी अतरू पेस्ट नियन्त्रण हो जायेगा। चूंकि यह दूसरी प्रजातियों के लिये हानिकारक नहीं है तथा इसका छिड़काव भी नहीं किया जाता है अतरू इससे प्रदूषण भी नहीं होगा। इस प्रकार लैंगिक आकर्षों फीरोमोन को एक सुरक्षित एवं प्रभावी कीट नियन्त्रण में प्रयोग किया जा सकता है।

17.6 रॉकेट प्रणोदक

वे रासायनिक पदार्थ, जो राकेट को आवश्यक ऊर्जा एवं शक्ति प्रदान करते हैं, राकेट प्रणोदक कहलाते हैं।

रॉकेट प्रणोदक ऑक्सीकारक पदार्थ तथा ईधन का मिश्रण होते हैं जिन्हें रॉकेट ईजन में जलाने पर दहन क्रिया के परिणाम स्वरूप बहुत अधिक मात्रा में गर्म गैसें बनती हैं। ये गैसें रॉकेट मोटर के नॉजिल (Nozzle) से बाहर निकलती हैं जिससे रॉकेट को ऊपर उठाने के लिए आवश्यक शक्ति प्राप्त होती है।

17.6.1 रॉकेट प्रणोदक के लक्षण

एक अच्छे राकेट प्रणोदक में निम्न गुणधर्म होने चाहिए–

1. रॉकेट प्रणोदक को ठोस अथवा द्रव अवस्था में होना चाहिए जिससे उसके भण्डारण के लिए कम स्थान की आवश्यकता हो ।
2. ईधन तथा ऑक्सीकारक पदार्थ का शीध्र मिश्रण बनना चाहिए।
3. उसे अत्यधिक ज्वलनशील होना चाहिए जिससे उसके दहन से राकेट को उच्च्व वेग प्रदान हो सके।
4. उसके दहन से कोई अवशेष जैसे राख या अन्य ठोस आदि नही बचना चाहिए।
5. इसकी रासायनिक क्रिया अति तीव्र होनी चाहिए।

17.6.2 रॉकेट प्रणोदक के प्रकार

रॉकेट प्रणोदकों की भौतिक अवस्था के आधार पर उन्हें निम्न तीन प्रकार में वर्गीकृत किया जा सकता है –

(अ) ठोस प्रणोदक

(ब) द्रव प्रणोदक

(स) मिश्रित या संकरित प्रणोदक

(अ) ठोस प्रणोदक

इस प्रकार के प्रणोदक में ईधन तथा ऑक्सीकारक दोनों ठोस अवस्था में होते हैं। ठोस प्रणोदक दो प्रकार के होते है –

1. संयुक्त तथा 2. द्वि क्षारीय

संयुक्त ठोस प्रणोदक सबसे सामान्य एवं अधिक प्रचलित प्रणोदक हैं। ये ईंधन, ऑक्सीकारक तथा योगशील पदार्थ से मिलकर बने होते हैं। ईधन के रूप में पॉलीयूरेथेन या पॉलीब्यूटाडाइईन, ऑक्सीकारक के रूप में अमोनियम परक्लोरेट तथा सूक्ष्म विभाजित मैग्नीशियम या ऐल्युमिनियम को योगशील पदार्थ के रूप मे प्रयोग करते हैं।

द्वि क्षारीय प्रणोदक मुख्यतः नाइट्रो ग्लिसरीन तथा नाइट्रो सेलुलोस से मिलकर बने होते हैं। ठोस प्रणोदक को एक बार जला देने पर इन्हें शुरू या बन्द करने की व्यवस्था नहीं की जा सकती है।

(ब) द्रव प्रणोदक

इस प्रकार के प्रणोदक में ईधन तथा ऑक्सीकारक द्रव अवस्था में होते हैं। इस प्रकार के प्रणोदकों का प्रयोग बहुतायत में किया जाता है क्योंकि ठोस प्रणोदकों की तुलना में इनकी धकेलने (Thrusting) की शक्ति अधिक होती है तथा इनके प्रवाह को बन्द या खोल करके नियन्त्रित भी किया जा सकता है। ये दो प्रकार के होते हैं – (अ) एकल तथा (ब) द्वि प्रणोदक (अ) एकल प्रणोदक इस प्रकार के प्रणोदक में एक ही द्रव पदार्थ ईधन तथा ऑक्सीकारक दोनों का कार्य करता है। इनको जलाने पर अत्यधिक मात्रा में गर्म गैसें बनती हैं। हाइड्रेजीन, नाइट्रोमेथेन, हाइड्रोजन परॉक्साइड आदि इसके उदाहरण हैं। (ब) द्वि प्रणोदक इस प्रकार के प्रणोदक दो द्रवों का मिश्रण होते हैं जिसमें एक द्रव ईधन तथा दूसरा द्रव ऑक्सीकारक का कार्य करता है। ईधन के रूप में केरोसीन तेल, ऐल्कोहॉल, हाइड्रेजीन या द्रव हाइड्रोजन तथा ऑक्सीकारक के रूप में द्रव ऑक्सीजन, द्रव नाइट्रोजन टेट्राऑक्साइड या नाइट्रिक अम्ल आदि को प्रयोग करते हैं। ये प्रणोदक बहुतायत में प्रयोग किये जाते हैं। संकरित अथवा मिश्रित प्रणोदक इस प्रकार के प्रणोदक मुख्यतरू ठोस ईंधन तथा द्रव ऑक्सीकारक का मिश्रण होते हैं। जैसे ऐक्रिलिक रबड़ (ईधन के रूप में) तथा द्रवित नाइट्रोजन टेट्राऑक्साइड (ऑक्सीकारक के रूप में) का मिश्रण।

17.6.3 प्रयोग किये गये कुछ प्रणोदक :

निम्नलिखित प्रणोदकों का प्रयोग विभिन्न आन्तरिक्ष यानों या राकेटों में किया गया है–

1. अमेरिका के सेटर्न (Saturn) बूस्टर रॉकेट के प्रारम्भिक चरण में केरोसीन तेल एवं द्रव ऑक्सीजन का मिश्रण तथा बाद के चरण में द्रव हाइड्रोजन एवं द्रव ऑक्सीजन का प्रयोग किया गया था।
2. रूस के रॉकेट प्रोट्रॉन (Proton) में केरोसीन तेल तथा द्रव ऑक्सीजन का मिश्रण प्रयोग किया गया था।
3. भारतीय अंतरिक्ष उपग्रह कार्यक्रम के अन्तर्गत एस.एल. वी. (SLV), ए.एस.एल.वी (ASLV) में संयुक्त ठोस प्रणोदक का प्रयोग किया गया था।
4. भारतीय अंतरिक्ष उपग्रह कार्यक्रम के राकेट पी.एस.एल. वी. (PSLV) के प्रथम तथा तृतीय चरण में HTPB

(Hydroxyl Terminated Polybutadiene): आधारित ठोस प्रणोदक तथा द्वितीय चरण में HTPB (Hydroxyl Terminated Polybutadiene) को द्रव प्रणोदक एवं द्रवित नाइट्रोजन टेट्राऑक्साइड(N_2O_4) को ऑक्सीकारक तथा चतुर्थ चरण में मोनोथिल हाइड्रेजीन (MMH) को ऑक्सीकारक तथा चतुर्थ चरण में मोनोमेथिल हाइड्रेजीन (MMH) को द्रव प्रणोदक तथा नाइट्रोजन के मिश्रित ऑक्साइड को ऑक्सीकारक के रूप में प्रयोग किया गया।

17.7 उन्नत या अग्रगत पदार्थ (Advanced Matrials)

ये आधुनिक विज्ञान की देन तथा आवश्यकता है। कुछ मुख्य उन्नत पदार्थ निम्न है–

17.7.1 कार्बन तन्तु (Carbon Fibres)

कार्बन की वलयी संरचनाओं युक्त लम्बी श्रृंखला को कार्बन तन्तु कहते हैं। ये स्टील से अधिक मजबूत, टाइटेनियम (Ti) से अधिक सख्त तथा ऐल्युमिनियम (Al) से अधिक हल्के होते हैं। कम घनत्व तथा अधिक यांत्रिक सामर्थ्य के कारण इनका महत्व बहुत अधिक है।

कार्बन तन्तु को कई प्रकार से तथा कई प्रारम्भिक पदार्थों जैसे श्यान रेयॉन, पॉलीऐक्रिलोनाइट्राइल रेजिन, गैसें (मेथेन, बेन्जीन) आदि के बहुलकीकरण से बनाया जा सकता है। इनके गुण पर इनके निर्माण विधि का बहुत अधिक प्रभाव होता है। कार्बन तन्तु की संरचना को निम्न प्रकार से व्यक्त करते हैं –

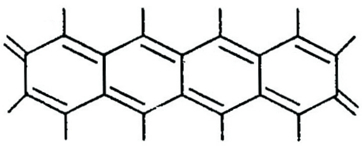

यदि कार्बन तन्तु को हल्के भार वाले पदार्थों जैसे इपॉक्सी रेजिन, पॉलीऐस्टर रेजिन या पॉलीऐमाइड के साथ प्रबलन किया जाता है तो इसे कार्बन तन्तु प्रबलन प्लास्टिक कहते हैं तथा जब प्रबलन कार्बन साँचे (Matrix) में किया जाता है तो इसे कार्बन तन्तु प्रबलन कार्बन कहते है।

17.7.2 कार्बन तन्तु के उपयोग

कार्बन तन्तु के विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपयोग है। जीव विज्ञान के क्षेत्र में ये हड्डी की प्लेटों के घटक के रूप में, कूल्हे के जोड में, स्नायु और कृत्रिम हृदय लगाने आदि में उपयोग में लाये जाते हैं। CFRP तथा CFRC का उपयोग कुछ खेलकूद सामान जैसे टेनिस व बैडमिन्टन रैकेट, तीव्र धावक साइकिल के फ्रेंम में, तीव्र गति से चलने वाली गाड़ियों आदि में होता है। इसका उपयोग कुछ रक्षा सामग्री में तथा अन्तरिक्ष यान बनाने में होता है। इसको अग्नि जैसी मिसाइल के नाक के ऊपरी सिरे और उसके अग्रभाग की सुरक्षा के लिए तथा कुछ रॉकेट के घटकों पर लगाया जाता है।

अभ्यास प्रश्न :

अतिलघुउत्तरात्मक प्रश्न–

1. साबुनीकरण किसे कहते है?
2. कठोर एवं मृदु साबुन किसे कहते है?
3. अपमार्जक किसे कहते है?
4. जैव अपघटनी एवं जै अपघटनी अपमार्जक क्या होते है?
5. एक धनायनिक अपमार्जक का उदाहरण दीजिए।
6. वर्णमूलक किसे कहते है? इसके उदाहरण दीजिए।
7. वर्णवर्धक से क्या अभिप्राय है। इनके उदाहरण दीजिए।
8. मॉडेन्ट रंजक क्या होते है? इसके उदाहरण दीजिए।
9. ट्राईफेनिल मेथेन रंजक क्या होते है। इसके उदाहरण दीजिए।
10. वेट रंजक क्या होते है? इसके उदाहरण दीजिए।

लघुउत्तरात्मक प्रश्न–

1. साबुन क्या होते है? एक उदाहरण दीजिए।
2. साबुन एवं अपमार्जक में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
3. मिशेल निर्माण द्वारा साबुन तथा अपमार्जक की क्रिया को समझाइये।
4. साबुन रहित साबुन क्या होते है? उदाहरण द्वारा समझाइये।
5. धनायनी, ऋणायनी एवं उदासीन अपमार्जकों को सउदाहरण समझाइये।
6. फिनोफथेलीन किस श्रेणी का रंजक है। इसकी संरचना बनाइये।
7. निम्न रंजकों की संरचना दीजिए–
   1. मेथिल ऑरेन्ज 2. फलुओरसीन 3. ऐलिजरीन
8. रंजक एवं वर्णक में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
9. रंजकों के सामान्य लक्षणों को समझाइये।
10. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिये।
    1. सीधे रंजक 2. पर्कीर्णन रंजक 3. अन्तर्निहित रंजक

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. साबुन क्या होते है? इन्हें किस प्रकार बनाया जाता है। इनसे अपमार्जन क्रिया को समझाये।
2. अपमार्जन क्या है? इनका वर्गीकरण कीजिये तथा अपमार्जन क्रिया को समझाइये।
3. रंजकों के संरचनात्मक लक्षणों के लिए विट सिद्धान्त को समझाइये।
4. उपयोगिता के आधार पर रंजकों का वर्गीकरण कीजिए।
5. संरचना के आधार पर रंजकों का वर्गीकरण कीजिए।

1. पीड़हारी औषधि किसे कहते है? कोई दो पीड़ाहारी के उदाहरण दीजिए।
2. प्रति अम्ल किसे कहते है? दो उदाहरण दीजिए।
3. प्रतिजैविकी किसे कहते है? इसकी खोज किससे की गई तथा इसे क्या नाम दिया गया? स्ट्रेप्टोमाइसिन तथा क्लोरेम्फेनिकॉल के उपयोग लिखिए।
4. निम्न पर टिप्पणी लिखो।
   (i) प्रतिहिस्टैमिन
   (ii) सल्फा औषधियाँ
5. विस्तृत, संकीर्ण व सीमित स्पैक्ट्रम प्रतिजैविकी का एक–एक उदाहरण लिखिए।
6. प्रतिजैविक औषधि की खोज करने वाले वैज्ञानिक का नाम बताइए।
7 स्वापक तथा अस्वापक पीड़ाहारी में अन्तर बताइए। उचित उदाहरण भी दीजिए।
8. मधुमेह के रोगियों की कृत्रिम मधुरण कर्मक की आवश्यकता क्यों पड़ती है?
9. एक खाद्य परिरक्षक का नाम लिखिए।
10. सैकरीन की जल में अविलेय एवं जल में विलेय संरचना के सूत्र लिखिए।
11. रासायनिक परिरक्षक के तीन गुण लिखिए।
12. एकल द्रव प्रणोदक का उदाहरण लिखिए।
13. संक्षिप्त टिप्पणी दीजिए।
    (अ) कीट प्रतिकर्षी (ब) कार्बन तन्तु

❑❑❑